समता कथा माला पुष्पांक-2

स्वाभिमान

श्री धर्मेशमुनिजी म. सा.

प्रकाशक
श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ
समता भवन, बीकानेर (राज-

❖ **समता कथा माला पुष्पांक–2**

❖ **स्वाभिमान**

❖ **श्री धर्मेशमुनिजी म.सा.**

❖ **प्रथम संस्करण** : मार्च, 2008, 3100 प्रतियाँ

❖ **मूल्य** : 10/-

❖ **अर्थ–सहयोगी** :
श्री आनन्दराजजी खिंवेसरा, चैन्नई

❖ **प्रकाशक** :
श्री अ. भा. साधुमार्गी जैन संघ
समता भवन, रामपुरिया मार्ग, बीकानेर– 334005 (राज.)
दूरभाष : 0151-2544867, 3292177, 2203150 (Fax)

❖ **आवरण सज्जा व मुद्रक** :
तिलोक प्रिंटिंग प्रेस, बीकानेर
दूरभाष : 9314962475

प्रकाशकीय

शासन प्रभावक विद्वान् श्री धर्मेशमुनिजी म.सा. द्वारा रचित **स्वाभिमान** साहित्य कंचनपुर गाँव के एक धन्ना सेठ परिवार की कहानी है। जो बड़े ही सुख एवं आनन्द के साथ अपने पुत्रों एवं पुत्रवधुओं के साथ जीवन यापन करते थे। जिसमें सबसे छोटी पुत्रवधू मोहिनी को अपने ही अभिमानी परिवार के सामने अपने स्वाभिमानी व्यक्तित्व को किस प्रकार जीवित रखा जाये; उन्हीं संकल्पों को साकार रूप देने का एक उपक्रम है। इन्हीं संकल्पों को साकार रूप देने के लिए अन्तिम क्षण तक धर्म का साथ न छोड़ते हुए संघर्षशील जीवन में भी महामंत्र एवं उसके प्रति आस्था का एक सुन्दर चित्रण किया गया है। जिसमें प्रेरणा दी गई है कि महामंत्र स्मरण करने से कितनी शांति मिलती है एवं विकट परिस्थितियाँ अपने आप ही दूर हो जाती है।

साहित्य की भाषा इतनी सहज एवं सरल है कि बाल, युवा, वृद्ध सभी को पढ़ने में रोचकता महसूस होगी। अपने नाम एवं शीर्षक की सार्थकता को सिद्ध करते हुए जिस शैली में इसकी रचना की गई है वह न केवल हृदय को स्पर्श

करती है अपितु और अधिक जिज्ञासा उत्पन्न करती है और यही महान् रचनाकार की महती सफलता है।

श्रद्धेय श्री धर्मेशमुनिजी म.सा. द्वारा लिखित प्रेरक कहानी समाज के सामने प्रस्तुत करते हुए हमें बड़ी प्रसन्नता हो रही है। इस पुस्तक से हम कहानियों की पुस्तकों की श्रृंखला **समता कथा माला** के रूप में प्रारम्भ करने जा रहे है। भविष्य में इसके अंतर्गत और भी पुस्तकों का प्रकाशन किया जायेगा।

उक्त साहित्य के प्रकाशन में समाज के धर्मनिष्ठ श्री आनन्दराजजी खिंवेसरा, ने जो सहयोग प्रदान किया है तदर्थ हम उनके अत्यंत आभारी है। विश्वास है कि सत्साहित्य के प्रकाशन में आपका निरन्तर सहयोग प्राप्त होता रहेगा।

इसी मंगलमनीषा के साथ.....

मदनलाल कटारिया

संयोजक–साहित्य प्रकाशन समिति

श्री अ.भा. साधुमार्गी जैन संघ, बीकानेर

vFkZ lg;ksxh ifjp;

उदारमना, सरल स्वभावी, धर्मनिष्ठ, सेवाभावी चैन्नई निवासी श्रीमती जीवनकंवरबाई–श्री भंवरलालजी खिंवेसरा एक आदर्श दम्पत्ती है। खिंवेसरा दम्पत्ती ने अपने जीवन में अनेक त्याग–प्रत्याख्यान ग्रहण किये हुए है। श्रीमती जीवनकंवर बाई खिंवेसरा की रत्नकुक्षी से 6 पुत्र एवं 2 पुत्रियों का जन्म हुआ।

आपके ज्येष्ठ पुत्र श्री आनन्दराजजी खिंवेसरा सरल एवं सौम्य स्वभावी व्यक्तित्व के धनी पुरुष है। आप अत्यंत ही मिलनसार, उदारमना एवं सेवाभावी युवारत्न है। आप अनेकों सामाजिक, धार्मिक धार्मिक संस्थाओं से जुड़े हुए हैं एवं उनके पोषक है। आपने श्री साधुमार्गी जैन संघ, चैन्नई के पूर्व उपाध्यक्ष पद पर रहते हुए अनेकों प्रशंसनीय एवं सराहनीय कार्यों को निष्पादित किया हैं। आप श्री अ.भा.साधुमार्गी जैन संघ के कार्यकारिणी सदस्य के रूप में भी अपनी सेवाएँ दे रहे हैं तथा संघ के प्रत्येक कार्य को रुचिपूर्वक पूर्ण करने में विश्वास रखते हैं। आपका कार्य क्षेत्र इतना विशाल हैं कि आप धार्मिक संस्थाओं के साथ–साथ अनेकों सामाजिक संस्थाओं में रहते हुए उनके उत्थान के लिये निरन्तर प्रयत्नशील रहते हैं। वर्तमान में आप विल्लीवाक्म जैन संघ को अध्यक्ष पद पर अपनी सेवाओं से लाभान्वित कर रहे हैं।

इसी प्रकार ब्रह्मऋषि आश्रम तिरुपति गौशाला के अध्यक्ष पद पर अपनी सेवाएँ देते हुए जीव कल्याण के प्रति समर्पणा भाव से पूर्णतया ओत–प्रोत हैं। आपकी धर्मपत्नी श्रीमती शांताबाई सच्चे अर्थों में आपकी धर्म सहायिका है। जो सदैव संत–सतियों की सेवा

एवं आतिथ्य सत्कार में तत्पर एवम् अग्रणी रहती है। आपकी धर्म पत्नी आप के धार्मिक कार्यों में कन्धे से कन्धा मिलाकर सदैव सहयोग देती रहती है। आपके दोनों पुत्र श्री यशंवतजी एवं श्री बलवंतजी आप ही के पद्चिन्हों पर चलकर परिवार की गौरवशाली परम्परा का निर्वहन कर रहे हैं। आपकी तीनों सुपुत्रियाँ श्रीमती अनुराधा राठौड़, प्रिया बाफना व मोनिका रांका व आपकी पुत्रवधू श्रीमती अनिता व श्रीमती पिंकी खिंवेसरा भी धार्मिक भावनाओं से ओत–प्रोत है। आपके चारों पौत्र चि. अरविन्द, अभिनन्दन, अभिराम एवं ऋषभ खिंवेसरा भी इसी पथ पर चलते हुए अपने परिवार की कीर्ति को आगे बढ़ा रहे हैं।

आपका पूरा परिवार श्री साधुमार्गी जैन संघ, चैन्नई के प्रमुख घरों में से एक है। आपके परिवार ने समाज के अनेक कार्यों में अपना अनुकरणीय सहयोग प्रदान किया है। आपका सम्पूर्ण परिवार आचार्य श्री नानेश एवं आचार्य श्री रामेश के प्रति अनन्य श्रद्धा भावना से ओत–प्रोत है।

सामाजिक कार्यों के साथ–साथ आपका परिवार प्रामाणिक सोने–चांदी के व्यापार एवं कुशल उद्योगपति परिवारों में माना जाता है। आपका व्यवसाय आनन्द ज्वैलर्स के नाम से अपनी नैतिकता, गुणवता व कर्मनिष्ठा से पूरे चैन्नई में विख्यात है।

इस पुस्तक के प्रकाशन में आपके द्वारा जो सहयोग प्राप्त हुआ है उसके लिए संघ परिवार आभारी हैं और हम प्रार्थना करते है कि खिंवेसरा परिवार समाज एवं देश की सेवा करते हुए प्रगति के पथ पर निरन्तर गतिमान रहे एवं इसी तरह संघ एवं शासन की सेवा करता रहे। आपकी असीम श्रीवृद्धि की भावना एवं शुभाकामनाओं के साथ.....।

श्री अ.भा.सा. जैन संघ द्वारा प्रकाशित साहित्य

1.	जिणधम्मो	: 150/–
2.	आत्मसमीक्षण	: 80/–
3.	काव्यमय उत्तराध्ययन सूत्र	: 80/–
4.	श्री गणेशीलालजी म.सा. का जीवन चरित्र	: 125/–
5.	साधुमार्ग की पावन सरिता	: 200/–
6.	समता सुमन	: 25/–
7.	एक सितार अस्सी झणकार	: 7/–
8.	चिन्तनः मनन अनुशीलन भाग–2	: 10/–
9.	नाना गुरु की कहानी	: 6/–
10.	समीक्षण ध्यान मनोविज्ञान का एक प्रयोगात्मक रूप	: 10/–
11.	कर्म प्रकृति भाग – 1	: 60/–
12.	कर्म प्रकृति भाग – 2	: 200/–
13.	श्री राम उवाच भाग 1 से 9 तक (प्रति पुस्तक)	: 30/–
14.	नानेशवाणी भाग 1 से 49 तक (प्रति पुस्तक)	: 30/–
15.	समता पर्युषण पर्वाराधना	: 20/–

16. श्री दशवैकालिकसूत्र	:	20/–
17. जैन संस्कार पाठयक्रम भाग 1 से 8 तक (सैट)	:	35/–
18. अपश्चिम तीर्थंकर महावीर भाग–1	:	40/–
19. द्वादश चारित्र संग्रह	:	12/–
20. तत्त्व का ताला ज्ञान की कुंजी भाग– 1	:	15/–
21. तत्त्व का ताला ज्ञान की कुंजी भाग–2	:	10/–
22. जैन तत्त्व निर्णय भाग –1	:	10/–
23. जैन तत्त्व निर्णय भाग–2	:	10/–
24. अद्‌भुत योगी	:	50/–
25. परमार्थ परिचय – 1	:	20/–
26. परमार्थ परिचय – 2	:	20/–
27. पूर्ण स्वतन्त्रता की राह	:	18/–
28. जैन संस्कृति का राजमार्ग	:	15/–
29. प्रचलित स्त्रोत सार्थ	:	20/–
30. अन्तगडदसाओ सूत्र	:	15/–
31. प्रतिक्रमण सूत्र	:	3/–
32. सामायिक सूत्र	:	2/–
33. साधना विवेक	:	2/–
34. गणेश गुण शतक	:	10/–

स्वाभिमान

भारत–भू पर कंचनपुर नाम की एक अति रमणीय नगरी थी। जिसकी ख्याति जन–मन को सहज मोहित करने वाली थी। सर्व ऋतुओं के यथाक्रम से प्रवाहित होने से वहाँ का जन–समुदाय हर ऋतु के अनुसार खान–पान, रहन–सहन, साज–सज्जा, वस्त्रालंकार का उपभोग करने का आनन्द लूटता था और सहज सुखानुभूतिमय जीवनयापन करता था व उसके अनुसार साधन प्राप्त करने व जुटाने में भी सतत प्रयत्नशील रहता था। क्योंकि वहाँ का राजा धर्मराज और उनकी महारानी धर्मश्री दोनों ही "यथा नाम तथा गुण" सम्पन्न थे। इतनी विशाल राज–ऋद्धि प्राप्त करके भी उनमें अहं भाव तो प्रवेश ही नहीं कर पाया था। क्योंकि वे इसको अपनी मेहनत व बुद्धि का चमत्कार नहीं मानते हुए भवों–भवों का पुण्य या धर्म का ही सुफल अथवा प्रसाद मानते थे जिसमें अपने पूर्वजों का आशीर्वाद भी जुड़ा मानते थे; साथ ही, प्रजा का सौभाग्य भी। इसलिए उनका विश्वास था कि एक हरा–भरा वृक्ष जड़

के सिंचन करने से ही हरा–भरा रह सकता है। और यदि उसका सिंचन न हो तो उसे सूखते, ठूंठ होते देर नहीं लगती। इसी प्रकार यह जीवन के प्रांगण में सुख रूपी वृक्ष राज्य–ऋद्धि, परिवार, सुख–वैभव से जो हरा–भरा परिलक्षित हो रहा है, उसकी मूल जड़ धर्म और पुण्य ही है। इसलिए यदि इसको हरा–भरा, सदाबहार रखना या बनाना है तो आवश्यकता हैंइसके सिंचन व संरक्षण की।

इसलिए यह धर्माराधन करने व दीन–दुःखी, अनाथों–अभ्यागतों को यथायोग्य सहयोग देने में, प्रजा की भलाई के कार्य करने में ही हो सकता है, अन्यथा अपने ऐशो–आराम में और भोगोपभोग में व्यय करने से तो वह पाप की जड़ का पोषक होता हुआ उसको सुखाने वाला ही होगा। इसलिए वे अपने लिये केवल राज्य–मर्यादा का गौरव व उस पद की प्रतिष्ठा कायम रह सके, उतना ही राज्य–कोष में से धन व्यय करते। इसके अलावा बाकी सारा खजाना प्रजा के हित के लिये खोल दिया। कुएँ, तालाब, स्कूल, धर्मशाला, यातायात के साधन व पक्के मार्गों के साथ ही विशाल वनराजि, जिससे गरीब से गरीब और अभावग्रस्त व्यक्ति भी उसमें उत्पन्न साधनों से अपनी आजीविका प्राप्त कर सके एवं हर व्यक्ति धर्मगुरुओं, मुनियों, त्यागियों का सान्निध्य प्राप्त कर सके। और अपने जीवन को दया, करुणा, सदाचार, सद्व्यवहार, शिष्टाचार

के सुसंस्कारों से अनुरंजित कर सके ताकि इससे परस्पर प्रीति–भाव के साथ एक–दूसरे के सुख–दुःख में सहयोगी बनते हुए राज्य के गौरव को बढ़ाने में सहयोगी बनते रहें। इसी के सुफलस्वरूप वहाँ की प्रजा के हर वर्ग के व्यक्ति अपनी योग्यतानुसारैं व्यापारी वर्ग व्यापार के क्षेत्र में, कृषक वर्ग कृषि के क्षेत्र में, राजकर्मचारी राज्य–व्यवस्था के क्षेत्र में, अपने–अपने कर्तव्य का पूर्ण रूप से पालन करते हुए राज्यश्री के अभिवर्धन में जुटे हुए थे। साथ ही शिल्पकला, शास्त्रकला, संगीतकला आदि में प्रवीण कलाकार अपनी कला की विचक्षणता से सूदूर राज्यों में भी राज्य को महिमा–मंडित करने में पीछे नहीं थे। राज्य के प्रतिष्ठित व्यापारी स्थानीय प्रतिष्ठानों के साथ ही सूदूर राज्यों में अपने व्यापारिक कौशल का परिचय देकर राज्य–गौरव में चार चांद लगा रहे थे।

(2)

उसी कंचनपुर में श्रेष्ठी धनपत एवं उनकी धर्मपत्नी लक्ष्मी निवास करते थे। जिनकी राज्य–पथ के पास व्यापार वीथि में विशाल सप्तमंजिली हवेली थी। उसी में नीचे विशाल बड़े–बड़े गद्दी–तकिये के ऊपर श्वेत चद्दरों से आच्छादित दुकान थी जिसमें सोना, चांदी, हीरे, जवाहरात का व्यापार बड़े जोरों पर चलता था।

अनेक मुनीम–गुमाश्ते व्यापार में सहयोग हेतु रखे हुए थे। उन चतुर मुनीम–गुमाश्तों के सहयोग से सेठजी की अनेक राज्यों में पेढ़ियें चल रही थी। सेठ धनपत की व्यापारिक प्रामाणिकता की सब जगह अच्छी प्रतिष्ठा जमी हुई थी। सेठ–सेठानी की उदारता, आत्मीयता से राजदरबार में भी अच्छी इज्जत थी।

कुछ समय बाद श्रेष्ठी धनपत के घर में साल दो–साल के अन्तराल से चार पुत्र पैदा हुए जिनके क्रमशः जितेश, चन्द्रेश, दिनेश और गणेश नाम रखे गये। साथ ही सबका यथासमय बड़ी धूमधाम से जन्म–महोत्सव मनाया गया और सेठ धनपत व सेठानी लक्ष्मी ने सबके जन्म की खुशी में खूब दान–पुण्य के कार्य किये। चारों पुत्र माता–पिता व पारिवारिक सदस्यों एवं दास–दासियों के हाथों में अभिवर्धित होने लगे। बालवय से जब किशोरवय में आये तो सबको अच्छे गुरुकुल में शिक्षा प्राप्त करने हेतु भेज दिया गया जिसके फलस्वरूप जितेश, चन्द्रेश और दिनेश ने तो थोड़े समय में ही अपनी प्रतिभा का अच्छा विकास करके सर्वकलाओं में निपुणता प्राप्त करली और लग गये श्रेष्ठी धनपत के साथ व्यापार में हाथ बटाने में। पर गणेश इन सब में कमजोर व प्रकृति का भद्र था। वह किसी व्यापार की कला में प्रवीण नहीं होने से घर में खेती–बाड़ी का काम संभालने के साथ ही गाय, भैंस,

बैल–बछड़ों की सार–संभाल करता और माता–पिता, बड़े भाइयों की सेवा करता हुआ मस्त रहता था।

इधर जितेश, चन्द्रेश और दिनेश ने अपनी प्रतिभा से पेढ़ी के व्यापार को भी खूब विकसित कर दिया व उनकी वाक्पटुता एवं कार्यकुशलता से सहज ही हर व्यक्ति प्रभावित हुए बिना नहीं रहता, जिसके फलस्वरूप उनके यौवनवय में प्रवेश पाते ही अनेक बड़े–बड़े श्रेष्ठिवर्य अपनी–अपनी कन्याओं से सगाई करने हेतु आ–आ कर आग्रह करने लगे। आखिर श्रेष्ठी धनपत ने भी यथा–क्रम से तीनों की शादी कर दी। क्रमशः घर में तीन बहुएँ आ गईं। जिनके नाम भी क्रमशः चन्द्रकला, सुमंगला और शशिकला। तीनों ही बड़े घरानों की, जो अपने साथ में पीहर से खूब धन–माल लेकर आई थी। इसलिये तीनों अपने–आप को बड़े बाप की बेटी समझकर घर में अपना अधिकार जमाने की होड़ में लगी हुई थी और तीनों पुत्र दुकान पर।

(3)

अब रह गया बेचारा गणेश, जो था भी एकदम भोला–भाला और सरल–शांतस्वभावी। पर माता–पिता का परमभक्त, जिसको देखकर सेठ धनपत व सेठानी लक्ष्मी को रात–दिन एक ही चिन्ता रहती कि इसका

क्या होगा ? क्या ही अच्छा हो कि यदि कोई साधारण परिवार की ही बच्ची हो चाहे, दहेज में कुछ भी नहीं लाये पर इसके जैसी सरलस्वभावी व सेवा–भाविनी हो ताकि इसको संभाल सके और हमारी भी सेवा कर सके। ऐसी बहू मिल जावे तो इसकी जिन्दगी और हमारा बुढ़ापा भी आराम से निकल सके। क्योंकि ये तीनों तो बड़े बाप की बेटियें हैं।

इसी बात का चिन्तन करते हुए मौका देख रहे थे कि ऐसी कोई लड़की मिल जाये। आखिर खोजते–खोजते एक मोहिनी नाम की बाला, जो खाते–पीते घराने के सेठ कुन्दनमल की सुपुत्री थी जो हालांकि विशेष पढ़ी–लिखी व रूपवान तो नहीं थी, पर एक सद्गृहिणी में जो लक्षण होने चाहिए, वे उसमें मौजूद थे। आकृति से सौम्य और प्रकृति में भद्र थी।

सेठानी लक्ष्मी को वह भा गई। बस, फिर क्या था ? अन्य सगे– सम्बन्धियों द्वारा जब सेठ कुन्दनमलजी को समाचार मिले तो एकाएक तो वे विचार में पड़ गये कि कहाँ वे और कहाँ हम ? फिर सारी बात मालूम पड़ते ही मन में सोचौंचलो, बड़े घर में जाने से बेटी मोहिनी का जीवन तो सुखी हो जायेगा। इतनी लम्बी–चौड़ी जायदाद है तो इसके हिस्से में भी बहुत–कुछ आयेगी। ऐसा सोचकर उन्होंने स्वीकृति दे दी और सगाई का दस्तूर कर

दिया। और कुछ समय बाद विवाह भी सम्पन्न हो गया। मोहिनी हालांकि बड़ी बहूओं की तरह पीहर से भारी दहेज तो नहीं लाई, पर प्राप्त सद्–संस्कारों का खजाना साथ लेकर आई थी जिसके कारण कुछ ही दिनों में उसने अपनी विनयशीलता, मृदुता और सेवा–भावना से सास–श्वसुर के हृदय में स्थान बना लिया और अपने पति के हृदय में भी। साथ ही आस– पड़ौसियों के हृदय में भी।

अब तो उसकी दैनिक चर्या भी ऐसी ही बन गई कि प्रातः उठकर सबसे पहले महामंत्र के स्मरण के बाद सास–श्वसुर व पतिदेव को नमस्कार करके शौच–निवृत्ति के बाद सारे घर की सफाई करती, फिर गाय–भैंस के स्थान की सफाई करके उनको घास, चारा, बांटा आदि देकर बड़े स्नेह से सहलाकर फिर उनका स्वयं के हाथ से दूध निकालकर घर में लाती। बाद में पानी आदि छानकर, नया पानी कुएँ से स्वयं लाकर भरती। उसके बाद लकड़ी कंडे, चूल्हे आदि को देखकर फिर जलाती। और दूध गरम करके, नाश्ता तैयार करके सबको बड़े प्रेम से करने का आग्रह करती। और सास–श्वसुर व पतिदेव को खिलाकर फिर जो–कुछ बचता, उसे खुद खा करके फिर रसोई बनाने बैठ जाती। और सारे पारिवार का भोजन बनाकर सबको भोजन करने का आग्रह करती।

फिर भी उसके चेहरे पर कभी किसी प्रकार का तनाव नहीं रहता। हमेशा अपने कर्तव्य का निर्वाह करके खुद भी खुश रहती और सबको खुश रखने का प्रयास करती।

लेकिन इतना सब–कुछ करते हुए भी उनकी जेठानियाँ चन्द्रकला, सुमंगला और शशिकला तो अपने अहं भाव में बेभान होकर उसकी एक नौकरानी से ज्यादा इज्जत नहीं करती। प्रति समय उसके साथ रुक्ष व्यवहार ही करती। उनके मस्तिष्क में हमेशा यही अहं का भूत कौतुक करता रहता कि ये दोनों तो हमारे पतिदेवों की कमाई पर मौज उड़ा रहे हैं। यही हाल गणेश का भी था। दिन–भर पशुओं को खेत में ले जाकर उनकी देखभाल करता, खेतों में मजदूरों के साथ मजदूर की तरह काम करता। शाम को घर आता और पहले तो भाभियें जो–कुछ डालती वह बड़े संतोष से खा लेता। अब पत्नी मोहिनी के आने के बाद तो वह स्वयं उसको जीमाती, उसके कपड़े धोती। थक जाने पर हाथ–पांव दबाती जिससे थोड़ी आराम की जिन्दगी जीने लगा। लेकिन बड़े भाई–भाभी तो उसको अपने ऊपर भार समझते और उसकी भी एक नौकर से ज्यादा इज्जत नहीं करते।

हाँ, सेठ धनपत और सेठानी लक्ष्मी उन दोनों की पूरी चिंता रखते। सुख–दुःख की बात सुनते और कभी जब बड़े पुत्र व बहुएँ उनकी उपेक्षा करते तो उनका हृदय

अन्दर ही अन्दर से दुःखित होता, पर कुछ बोल नहीं सकते क्योंकि उनका सारे घर पर दबाव था। इसलिये मन मार कर रह जाते और उनको सहलाते रहते। लेकिन मोहिनी कहतीं"आप हमारी चिन्ता न करें। वो तो हमारे पूज्य हैं। उनकी सेवा करना हमारा धर्म है। यह सुनकर दोनों गद्‌गद हो जाते और अन्तर्मन से आशीर्वाद देते कि तुम्हारा भविष्य उज्ज्वल हो।

(4)

गरमी का मौसम था। एक दिन सब भोजन आदि से निवृत्त हो चुके थे। सेठानी लक्ष्मी बीच चौक में अपनी खाट पर बैठी थी और हवा के झोंकों से थोड़ा शान्ति का अनुभव कर रही थी। इधर तीनों बड़ी बहुएँ भी एक–एक करके अपने कमरों से नीचे अपनी सास के पास आकर सेवा का अभिनय करती हुई पांव दबाने बैठी और अपनी वाक्‌पटुता से मीठी–मीठी वाणी द्वारा सासूजी को खुश करने लगी। इधर मोहिनी भी घर का शेष कार्य निवृत्त करके आज अपनी जेठानियों को सासूजी के पास बैठी देखकर पास आ गई और बैठ गई नित्य क्रमानुसार उनके पांव दबाने। आज चारों बहुओं का एक साथ अपने पास में बैठी देखकर हर्षित होती हुई सेठानी लक्ष्मी बोल पड़ींमेरी प्यारी बहुओं ! आज तुम चारों को देखकर बड़ी

खुशी हो रही है। पर एक बात मेरे मन को बार–बार नोचती रहती है कि क्या ये सब जीते जी ही प्रेम दिखा रही हैं या मरने के बाद भी कभी हमें याद करेंगी ?

क्योंकि हम रात–दिन यही देखते आये हैं कि जब तक सांस है तब तक सबको आस है और सांस निकलते ही आशा छूटने के बाद कौन किसको याद करते हैं ? यदि किसी का किसी के प्रति बहुत ज्यादा अपनत्व भी होता है तो कहावत हैं''नई बात नव दिन, खेंची–तानी तेरह दिन।' फिर तो सब भूल–भालकर मौज–शौक में लग जाते हैं। फिर हम बुड्ढे ही घर में भार–रूप पड़े हैं। कुछ काम–काज भी नहीं कर सकते। तो मरने के बाद तो फिर सम्बन्ध ही क्या रह जाता है। इस प्रकार के ऊलजलूल विचार मन में आते रहते हैं। यह कहते हुए लक्ष्मी सेठानी का गला भारी हो गया। और वह देखने लगी आँखें फाड़–फाड़ कर अपनी व पतिदेव की कड़ी मेहनत के बल पर बनाई बिल्डिंग आदि को।

सास लक्ष्मी की इन बातों को सुनकर बड़ी बहू चन्द्रकला बहुत आत्मीयता दिखाते हुए बोलीं''सासूजी आप ऐसी ऊलजलूल बातें कैसे कर रही हैं। हम आपकी बहुएँ आपके प्रति खाली स्वार्थभरी ऊपरी श्रद्धा–भक्ति ही नहीं रखती हैं। क्या आप जैसी सास को पाकर कभी भूल सकती हैं ? आप विश्वास रखो कि जब भी आप काल

करेंगे तो आपकी यादगार में भी प्रतिवर्ष उस तिथि को आपके नाम से दान–पुण्य करूँगी। इतने में दूसरी बहू सुमंगला बोलींसासूजी, मैं भी आपको विश्वास दिलाती हूँ कि उस दिन प्रतिवर्ष आप दोनों के स्मृति–दिवस के उपलक्ष्य में सभी बहन–बेटियों, रिश्तेदारों को बुलाकर जिमाऊँगी। इस प्रकार दोनों जेठानियों की बात सुनकर तीसरी बहू शशिकला बोल उठींसासूजी, मैं तो उस दिन आपको इस भव व पर–भव में भी शान्ति मिले, इसके लिए अखण्ड महामंत्र का जाप कराके सबको बड़े थाल में मिठाई भरकर प्रभावना बांटूंगी। इस प्रकार तीनों बड़ी बहुएं लटके–झटके के साथ अपनी बातों से सास को खुश करके अपनी भक्ति का प्रदर्शन करने लगी। इधर पास में बैठी सासूजी के पांव दबाती हुई छोटी बहू मोहिनी चुपचाप गंभीर मुद्रा धारण करके तीनों जेठानियों की बातें ध्यानपूर्वक सुन रही थी। तब उसकी ओर देखकर तीनों बहुएँ व्यंग्यात्मक भाषा में कहने लगींसासूजी राज ! हमने तो आपकी भक्तिभावना और हृदय में आपकी यादगार बनाने हेतु अपने दिल के भाव रख दिये। अब आपकी प्राणप्यारी छोटी बहू, जिसको आप अपने पीछे अपनी सम्पत्ति की उत्तराधिकारिणी समझती हैं और वह भी आपकी इसी उद्देश्य से दौड़–दौड़कर सेवा करती है जिससे आप भी उसको अपने हृदय का हार व बुढ़ापे का

आधार समझती हैं। हालांकि हम तो अपने हृदय से आपकी निष्काम भाव से जितनी सेवा कर सकती हैं, बिना दिखाये करती हैं, क्योंकि हमको तो आपकी सम्पत्ति की कोई आवश्यकता नहीं है। आपके आशीर्वाद से हमारे पतिदेवों ने अपनी कुशलता से श्वसुरजी से भी दस गुणा कारोबार बढ़ा लिया है। साथ ही हमारे पीहर से भी इतना माल मिला है और मिलता रहता है कि जिससे किसी बात की कमी नहीं है। परन्तु इस बेचारी के तो न तो पीहर से कुछ मिला, न मिलने की आशा है। और इधर इसके पति (हमारे छोटे देवर) गणेश भी ऐसे मिले हैं कि कुछ कमाना जानते ही नहीं। इसलिये इसको तो अब आपके धन पर ही सारी आशा है। इसलिये आप इसके मन की बात भी जान तो लीजिये कि आपकी यादगार में क्या गुल खिलायेगी ताकि आपके प्राण भी निकल जायें तो कम से कम आपको संतोष तो रहे। ऐसा कहकर वे तीनों आँखें मटकाती हुई उसकी ओर देखने लगी और बोलींफरमाइये देवरानीजी ! आप जो इतनी सासूजी की दौड़–दौड़ कर सेवा करती हैं और सासूजी राज भी आपके ऊपर पूर्ण मेहरबान हैं तो इनको भी आपकी सच्ची भक्ति का एहसास हो जाय ताकि अंतिम समय इनके प्राण शांति से निकल सकें।

छोटी बहू मोहिनी इतनी देर तक तो अपनी तीनों

जेठानियों की बातों को बड़ी धैर्यता के साथ सुन रही थी और यह सोचकर कि मेरी तो ये पूज्य हैं और बड़े घर की बेटियें हैं, तीनों जेठ भी कमाऊ व होशियार हैं। और अपनी होशियारी से सारे परिवार पर अपनी धाक जमा रखी है। पर बार–बार वचनों के विषभरे व्यंग्यबाण उसके हृदय को उद्वेलित करने लगे। इतनी दौड़–धूप करने के बाद भी अपने लिए तो कोई बात नहीं, पर पतिदेव के प्रति ऐसे उपेक्षा भाव को देखकर तो उसका मन व्यथित होने लगा और जाग उठा उसका अन्तर स्वाभिमान। और बोलीं"मेरी पूज्य जेठानीजी, आज आप तीनों के सास–श्वसुरजी के प्रति प्रदर्शित भक्ति–भाव और इनके मरने के बाद भी उसको साकार रूप करने की आपकी विचारधारा को सुनकर मैं प्रमुदित हो उठी। साथ ही आपने मेरे मन की भावना को भी अभिव्यक्त करने हेतु फरमाया, यह आपकी बड़ी कृपा है।

लेकिन आप जानते ही हैं कि हमारा जीवन तो आपकी कृपा पर ही चल रहा है। आपके सामने हमारी औकात ही क्या है ? फिर भी आप अपनी सासूजी की बहुत बड़ी प्रीति दिखाकर उनकी यादगार में जो–कुछ करने के भाव व्यक्त कर चुकी हैं और मैं भी इनकी एक बहू बनकर इस घर में आई हूँ तो ''फूल नहीं तो पांखुड़ी सही'' वाली कहावतानुसार कुछ करना अपना कर्तव्य

समझती हूँ। इसलिये मेरे मन में भी सास–श्वसुर की यादगार में यदि इनके आशीर्वाद से पतिदेव और मेरा भाग्य जगे तो मैं चाहती हूँ कि इनकी यादगार में एक विशाल नगर बसाकर उसमें इन्हीं के नाम से स्थाई धर्म–स्थान, हॉस्पीटल, पाठशाला, गरीब लोगों के लिए भोजनशाला आदि बनवाकर वृद्धाश्रम व अनाथालय की भी व्यवस्था करूं। बस, मेरी यही अंतर तमन्ना है। यह कहकर वह सासूजी के चरणों में झुक कर आशीर्वाद मांगने लगी।

अपनी छोटी देवरानी की उपरोक्त बात सुनकर तो तीनों जेठानियों के मन में ईर्ष्या की आग भभक उठी और बोली वाह ! वाह ! देवरानीजी बातें तो आपकी बहुत ऊँची–ऊँची सुनने को मिलीं, पर मन में आया कि इन बातों को बोलने से पहले अपने गिरहबान में तो झांककर देख लेती कि मैं कितने गहरे पानी में हूँ। मेरे पीहर की स्थिति कैसी है। जहाँ उनका जीवन भी हमारे सहयोग पर टिका हुआ है। साथ ही हमारे देवरजी तो ''अणकमाऊ को मीठा भोजन'' की कहावत चरितार्थ कर रहे हैं। यह तो हमारी एक भाई के नाते कृपा ही समझो कि चाहे वो पशुओं की पूंछ मरोड़ते हुए दिन भर खेतों में मजदूरों के साथ मस्ती मारते रहते हैं फिर भी कुछ नहीं कहते और तुम्हारी और उनकी सारी सुख–सुविधाएँ जुटाते रहते हैं।

छोटे मुँह बड़ी बात करने में कुछ नहीं लगता। ऐसी बात कहने के पहले अपने पति को पैसा कमाया कैसे जाता है, यह तो सिखाती ? तुमको मालूम क्या पड़ता कि एक–एक पैसा खून–पसीना बहाकर कैसे कमाया जाता है और कैसे परिवार व घर का खर्च चलाया जाता है ? केवल कल्पनाओं के महल चुनने में जोर नहीं लगता है। मालूम तो तब पड़ता है जब उसको साकार रूप देवें। इसलिये देवरानीजी, बड़े–बड़े स्वप्न संजोना और कल्पनाओं के महल चुनना और कल्पनाओं के घोड़े दौड़ाना बंद करो। और बात भी अपनी औकात को देखकर करो। ज्यादा लम्बी–चौड़ी शेखियें बघारने में कोई सार नहीं है। उससे तो कभी प्राप्त सुख–सुविधा भी छूट सकती है। इतना कहकर तीनों जेठानियां परस्पर बातें करती हुई मोहिनी पर उपेक्षाभरी दृष्टि डालते हुए चली गई ऊपर अपने कक्ष में।

(5)

छोटी बहू मोहिनी अपनी तीनों जेठानियों के व्यंग्यबाणों को सुनकर इतनी व्यथित हो गई कि उन बाणों ने उसका हृदय छलनी जैसा कर दिया। उसके हृदय में आग–आग लग गई। वह मन में चिन्तन करने लगीधिक्कार है ऐसा परतन्त्र जीवन जीने से। वह उठकर

सीधी अपने शयनागार में चली गई और गहन चिन्तन में डूब गई। आखिर इस निर्णय पर पहुँची कि बस, अब इतनी बेइज्जतीपूर्वक इस घर में रहने में कुछ सार नहीं है। चाहे मजदूरी करके पेट भरना पड़े अथवा भूखे ही सो जाना पड़े, उसमें ही संतुष्ट रहना उचित है। पर ऐसे घर में रहना उचित नहीं है। अब तो यहाँ से निकल जाना ही श्रेष्ठ है।

इतने में उसका पति गणेश पशुओं की सार–संभाल करके वहाँ पहुँच गया। यकायक उसने अपनी पत्नी मोहिनी को देखा तो आश्चर्यान्वित हो गया और सोचने लगा कि क्या बात है। हमेशा इसका चेहरा जो गुलाब की तरह खिला रहता, जिसके चेहरे पर खुशी अठखेलियाँ करती रहती हैं, जिसकी मुस्कान मेरी थकान को मिटा देती, जो मेरे आते ही हर्षित होकर सामने आती और अपनी मृदुवाणी से मेरे मन का विषाद हरकर आ□ाद पैदा कर देती। वही आज एकदम उदास बनकर निढ़ाल होकर बैठी है। न चेहरे पर मुस्कान, न खुशी। ऐसा गमगीन चेहरा कभी नहीं देखने में आया, क्या कारण है ? अन्तर्मन में बड़ा आश्चर्य करता हुआ उसके पास गया और बड़े प्रेमभरे मधुर शब्दों में बोलौंप्रिये ! आज मैं ऐसा कैसे, क्या देख रहा हूँ। मानों सूर्य असमय में निस्तेज हो गया हो। मानों राहु ने इसे ग्रसित कर रखा हो। ऐसे ही

आज तेरा सदा हंसता–मुस्कराता चेहरा मलिन निस्तेज बना हुआ है। तेरे चेहरे पर उदासीनता परिलक्षित हो रही है। जिन नयनों में प्रतिपल प्रेम का झरना प्रवाहित होता रहता था उन्हीं नयनों को आज मैं गमगीन देख रहा हूँ। ऐसी क्या बात हो गई जो तेरे अन्तर्मन को व्यथित कर रही है। क्या पीहर की याद सताने लग गई अथवा वहाँ से कोई दुःखद समाचार आए अथवा मेरे किसी क्रियाकलाप से या वचनों से तेरा दिल व्यथित हुआ ? जो–कुछ भी हो वह स्पष्ट बता।

पतिदेव गणेश के इन वचनों ने तो मोहिनी की अन्तःवेदना को नेत्रों के द्वारा बाहर प्रवाहित कर दिया। वह फूट–फूट कर रोती हुई कहने लगीं प्राणेश्वर ! अब मैं इस घर में रहना नहीं चाहती। क्योंकि अब आपकी भाभियों के विषभरे तानों के तीर सहे नहीं जाते। रात–दिन चाहे कितना ही इस परिवार के लिये मरो, खपो लेकिन हमेशा सूर्योदय से सूर्यास्त तक यही ताने सुनने को मिलते हैं कि बाप के घर से क्या लेकर आई, यह तो हमारे पतियों की कृपा समझो कि उन्होंने कड़ी मेहनत करके पैसा कमाया और तुम्हारी शादी की। और तुम दोनों का पालन–पोषण कर रहे हैं। तेरे पति गणेश ''अणकमाऊ को मीठा भोजन'' की कहावत को चरितार्थ करते हुए रात–दिन पशुओं के पूंछड़े मरोड़ते हुए मजदूरों

के साथ खेतों में मस्ती मारते हुए घूमते रहते हैं और आ जाते हैं दोनों समय भोजन करने सबसे पहले। पैसा कैसे कमाया जाता है उन्हें क्या मालूम पड़ता है।

वैसे तो ऐसे ताने हमेशा किसी–न–किसी बहाने सुनते–सुनते परेशान तो मैं थी ही फिर भी मन मारकर सह लेती, यह समझकर कि बड़े हैं। इसलिए मैंने आज तक कभी आपको भी मालूम नहीं पड़ने दिया पर आज तो हद से बाहर की बात हो गई। अभी घंटे–भर पहले ही, आप नहीं आये थे तब, गरमी के कारण मैंने सासूजी का खाट बाहर लगा कर बिस्तर बिछा के चौक में सुला दिया था। इतने में आपकी तीनों भाभियें भी आ गईं। और बैठ गई सासूजी के पास में। और करने लगी पांव दबाने का अभिनय और साथ ही मीठी–मीठी बातों के लटके–झटके।

इतने में सासूजी ने कहींअब थोड़े दिन और सेवा करलो जिंदी हूँ तब तक, न मालूम कब सांस निकल जावे। फिर मरने के बाद कौन याद रखेगा कि हमारे भी सासुजी थे। इस बात को सुनकर आपकी बड़ी भाभी कहने लगींमैं प्रतिवर्ष उस दिन की यादगार में दान–पुण्य करूँगी। दूसरी ने कहींमैं सारे परिवार को जीमाऊँगी। तीसरी बोलींमैं अखण्ड महामंत्र का जाप रखूंगी। इसके बाद कहने लगींयह आपकी प्यारी छोटी बहू, जो आपके धन की आशा में दौड़–दौड़ कर सेवा का नाटक करती

है, आप भी कहती हैंमेरी सेवा तो छोटी बहू ही करती है इसलिये मेरा जेवर वगैरह उसी को दूंगी। अब उसी को पूछ लीजिये कि यह आपके मरने के बाद क्या गुल खिलायेगी। ऐसा कहकर मेरी ओर ताकने लगी।

तब मैंने भी उनके सामने कह दिया कि यदि आपके आशीर्वाद से हमारा भी भाग्य साथ देगा तो मैं आप दोनों के नाम से एक नगर बसाकर उसमें दानशाला, पौषधशाला, विद्यालय, अस्पताल बनाकर गरीबों की सेवा का कार्य करूँगी। यह बात सुनते ही वो ऐसे–ऐसे वचनों के तीर मार–मार कर सासूजी के सामने मुझे अपमानित करने लगी। इसलिये पतिदेव ऐसे परतंत्र जीवन से या तो मरना अच्छा या यहाँ से निकल जाना अच्छा। चाहे भूखों ही मरना पड़े या मेहनत मजदूरी ही क्यों न करनी पड़े। मैं कष्ट सह लूंगी पर अब इस घर में तो नहीं रहूंगी।

साथ ही यह भी आपको विश्वास दिलाती हूँ कि मैं आपको किसी प्रकार का कष्ट नहीं आने दूंगी। पहले आपको खिलाकर फिर मैं खाऊँगी। भरना तो दो जनों का पेट ही है, जो मैं अकेली मजदूरी करके भी भर लूंगी। यहाँ इतनी रात–दिन मेहनत करके इनकी जी–हुजूरी करते रहने पर भी इतने परतंत्र और नौकरों से भी गई–बीती जिन्दगी जीने के बदले स्वतन्त्र जीवन जीते हुए सुख की नींद तो सो सकेंगे। इसलिये आप मन में

जरा भी मत घबराइये। वे सोचते हैं कि सब हमारी मेहनत से ही जी रहे हैं। तो हम भी अपने भाग्य की परीक्षा करके देखें। मुझे तो पूर्ण आत्मविश्वास है कि हमारी सद्भावना और पुरुषार्थ से हमारा भाग्य पलटेगा और हम इनसे भी अधिक सुख का जीवन जीते हुए, मैंने जो सासूजी को वचन दिया है, उसका भी पालन करके दिखायेंगे।

इसलिये प्राणेश्वर ! अब आप जरा भी मन में भय न लाते हुए हिम्मत धारण करके आज रात्रि में ही चुपचाप अपने सामान को व्यवस्थित कर, कोठी में बंद करके निकल जाइये। पति गणेश मोहिनी की बात सुनकर बोलेंप्रिये ! यह तो मैं स्वयं अपने भाइयों, भाभियों के दुष्ट व्यवहार से पूरा दुःखी हूँ और यह भी अनुभव करता हूँ कि वे हमको एक नौकर–नौकरानी से भी हीन समझते हैं। इसलिये मेरे मन में भी इस घर को त्याग कर अन्यत्र जाने का कई बार विचार बना।

माताजी–पिताजी व तेरा विचार करके ही मन मारकर बैठा हुआ हूँ। अब जब तेरा भी विचार बन गया है तो बस, चलने में ही सार है। बस, फिर क्या था ? मोहिनी ने सारा सामान एक कोठे में बंद करके ताला लगा दिया और चाबी ऐसे स्थान पर रख दी जो सहज किसी के हाथ नहीं आ सके। और साथ में कुछ आवश्यक बर्तन, कपड़े व सामायिक के उपकरण के साथ बची हुई

रोटी, सब्जी एक टिफिन में भरकर थोड़े–बहुत रुपये थे, वे अपने साथ ले लिये और पिछली रात्रि को महामंत्र का स्मरण करके अपने भाग्य व पुरुषार्थ पर भरोसा करके चल पड़े।

(6)

चलते–चलते प्रातः ब्रह्मवेला में एक स्थान पर, जहाँ एक धर्मशाला व पास ही कुआँ और उससे पानी निकालने की डोल और रस्सी पड़ी हुई देखकर विचार किया औा अभी वहीं रुककर थोड़ा विश्राम करने हेतु रुक गये। थोड़ी–सी निद्रा के बाद मोहिनी उठी और पतिदेव को जगाया और कहने लगीं‌अब आप उठ जाइये ताकि अपन बारी–बारी से शौच निवृत्ति करके फिर कुछ धर्म–जागरण करें। क्योंकि हमारी सफलता में यही सहायक बनेगा। साथ ही परलोक का भी पाथेय होगा। इतने दिन तो घर के गोरख–धंधों में हमारा समय ऐसे ही पूरा हो जाता था। जी चाहते हुए भी कुछ नहीं कर सकते थे। आज हमारे सुप्रभात का उदय हुआ है। इसकी शुरुआत हम धर्म–जागरणा से करेंगे।

पत्नी की बात को सुनकर गणेश भी उठा और शौच आदि से निवृत्त हो, आकर मोहिनी के पास बैठ गया। तब उसने अपने साथ लाये सामायिक उपकरण

निकाले और अपने एवं पतिदेव के लिये अलग–अलग आसन बिछाकर खुद के व पतिदेव के मुँह पर मुँहपत्ती बांध के, आज प्रथम अवसर होने से दोनों ने संवर धारण कर लिया और पतिदेव को माला हाथ में देकर नमस्कार महामंत्र का जाप पहले खुद बोलकर पतिदेव को लयबद्ध बोलने का आग्रह किया। गणेश ने एक–दो बार हिचकिचाते अशुद्ध उच्चारण किया। फिर उसके भी जम गया। दोनों के मधुर लय में महामंत्र के स्मरण से वहाँ का सारा ही वातावरण शांत–प्रशांत हो गया। साथ ही उनके मन में भी आज परम शांति का अनुभव होने लगा।

उसके बाद मोहिनी बोलीं"पतिदेव अब सूर्योदय भी हो गया है और हमें आगे भी बढ़ना है। इसलिये कम से कम, ज्यादा नहीं तो नवकारसी का तप तो कर ही लें जिसका समय सूर्योदय के बाद अड़तालीस मिनट का होता है। वैसे रात्रि को हम घर में भी नहीं खाते थे। लेकिन प्रातः होते ही आपको कार्य में लगना पड़ता था। इसलिये सूर्योदय के साथ आपको खाना पड़ता था। पर आज ऐसी कोई अड़चन नहीं है और उसका समय भी अब आने वाला ही है। तब तक अपना सामान भी व्यवस्थित करलें ताकि नवकारसी आते ही कुछ जो साथ है, उसको खाकर ही रवाना हो जायेंगे। ऐसा कहकर उसने खुद के साथ पतिदेव को भी नवकारसी के प्रत्याख्यान

करा दिये और दोनों सामान व्यवस्थित करने में लग गये। इतने में मोहिनी की दृष्टि वहीं कोने में बैठी एक कुतिया पर पड़ी जो प्रसव पीड़ा से पीड़ित हो रही थी। उसने उसे देखकर सोचाँबच्चे पैदा होते ही इसका पेट खाली होने से यह अपने बच्चों को ही खा लेगी इसलिए यदि उसको खाने के लिए रोटी मिल जाये तो बच्चे बच सकते हैं। ऐसा सोचकर ज्यों–ज्यों बच्चे पैदा होते, त्यों–त्यों एक–एक रोटी डालती जाती। ऐसे करके सात–आठ रोटियाँ डालदी। जिससे सब बच्चे बच गये। इससे मोहिनी को हार्दिक प्रसन्नता हुई। साथ ही गणेश ने भी उसकी अनुमोदना करते हुए कहाँभाग्यवान्, तूने तो इन बच्चों को अभयदान देकर महान पुण्योपार्जन किया है। अब शेष बची रोटियाँ दोनों ने खाई और आगे चल पड़े।

(7)

लगभग चार–पाँच मिलोमीटर चलने के बाद ही एक गाँव आ गया जिसको देखकर उनके पांव वहीं रुक गये। एक साथ इतना चलने से थकान भी महसूस होने लगी। साथ ही भूख भी तीव्र सताने लगी। इसलिए एक मकान के बाहर बने हुए चबूतरे पर सामान रखकर विश्राम करने लगे। इतने में उस घर में से एक वृद्धा बाहर आई और पूछने लगीँआप कहाँ से पधारे हो ? आप का नाम

क्या है ? इस प्रकार बुढ़िया के पूछते ही तत्क्षण दोनों ने उनके चरणों में नमस्कार किया और अपना परिचय बताते हुए कहने लगेंमाताजी, हम अपने भाग्य का परीक्षण करने घर का त्याग करके निकले हैं। और अब यह भाग्य जहाँ ले जाएगा, जैसा रखेगा, वैसे रहते हुए आगे बढ़ रहे हैं।

आज प्रातः ही हम पीछे धर्मशाला में ठहरे थे। महामंत्र के जाप के पश्चात् नवकारसी आने पर साथ लाए भोजन को खाने की तैयारी कर रहे थे कि अचानक सामने कुछ दूरी पर ही कोने में एक कुतिया ने बच्चों को जन्म दिया जिससे उसका पेट खाली हो गया। तब मैंने देखा कहीं पेट खाली होने से यह इन बच्चों को खा नहीं जाये, इसलिए हमने रोटियाँ उस कुतिया को खिला दी और उसका पेट भर जाने से वे बच गये। फिर शेष दो रोटी बची, उनको हम दोनों ने खाया और उसके बाद चलके यहाँ आ गये। अब कुछ विश्रान्ति करके आगे बढ़ जायेंगे।

उस वृद्धा ने ज्योंही यह बात सुनी तो सहज बोल उठींअहो ! मेरा भी भाग्य जाग गया कि आप जैसे दयावान, धर्मात्मा पति–पत्नी का मेरे घर में शुभागमन हुआ। बस, अब तो आपको मेरे यहाँ मेहमान बनकर भोजन स्वीकार करना है। मैं भी अकेली ही हूँ इसलिये अभी सामायिक आदि से निवृत्त होकर उठी हूँ। बस,

थोड़ी घर की सफाई करके फिर भोजन बनाती हूँ। तब तक आप भीतर पधारिये और थोड़ा विश्राम कीजिये। यह कहकर बुढ़िया ने उनके लिये भीतर के कमरे में चटाई बिछा दी।

वृद्धा माँजी के अत्याग्रह से अपना सामान लेकर अन्दर चले आये। इधर बुढ़िया झाड़ू लेकर घर की सफाई करने लगी। यह देखकर मोहिनी शीघ्र उठी और वृद्धा माँजी के हाथ से झाड़ू खींचकर कहने लगीं माँजी आप अन्य कार्य देखिये। यह कार्य तो मुझे करने दीजिये। मैं बैठी हूँ और आप मेरे सामने झाड़ू निकालें, क्या यह नारी जाति के लीये शोभाजनक हो सकता है ? पर बुढ़िया इनकार करने लगीं नहीं, आप तो मेहमान हैं। आप से यह काम कैसे कराना उचित है। पर मोहिनी ने अत्याग्रह करके झाड़ू हाथ में लेकर शीघ्र सारे घर की सफाई कर दी। फिर बुढ़िया रसोई बनाने बैठी तो वहाँ भी पहुँचकर रसोई करने बैठ गई। वृद्धा के लाख मना करने पर भी सारा भोजन बनाकर बोलीं माँजी, अब आप भोजन कर लीजिये। लेकिन वृद्धा कहने लगीं वाह, यह कैसे हो सकता है ? मेहमान तो भूखे बैठे रहें और मैं भोजन कर लूं। नहीं, यह नहीं हो सकता, पहले आप भोजन कीजिए फिर मैं भोजन करूँगी।

तब उसने पहले गणेश को थाली परोसी और

उसको भोजन हेतु बिठाया और फिर मोहिनी को भोजन परोस कर भोजन का आग्रह करने लगी। लेकिन वह कहने लगीं नहीं, आप और हम साथ ही भोजन करेंगे। ऐसा कह दोनों ही शामिल बैठ कर भोजन करने लगीं। भोजन करते–करते बातचीत के सिलसिले में जब परिचय हुआ, तब मालूम पड़ा कि यह दूर रिश्ते में हमारे गोत्रीय ही हैं। तो मन ही मन बड़ी प्रसन्न हुई और बड़े दुःखित मन से अपनी स्थिति प्रकट करने लगी कि सेठजी, बच्चे सब मुझे मझधार में छोड़ कर चले गये। इतनी जमीन, जायदाद, धन व हवेली होते हुए भी आज मेरे जैसी दुःखियारी कोई नहीं हैं। किसको सुनाऊँ अपना दुःख। यहाँ नजदीक के पारिवारिकजन भी कोई नहीं है। ऐसा कहकर वह वृद्धा माँजी बड़ी ही गमगीन होती हुई आँखों से आँसू बहाकर कहने लगीं आज तुमको पाकर दुःख कुछ कम हुआ कि देर–सबेर कोई गोत्री भाई आकर तो मिला। बस, अब यह मानलो कि मेरे और तुम्हारे भाग्य से ही यह योग जुड़ा है। इसलिये अब यहाँ से जाने का नाम न लेकर यहीं रहो और इस सारी जायदाद को संभालो। बस, यही मेरा आग्रह है।

(8)

बुढ़िया की इस तरह की आत्मीयता को देखकर

गणेश व मोहिनी का सहज मन प्रभावित हुए बिना नहीं रहा। पर कुछ दिन रहने के बाद जब बुढ़िया की प्रकृति, प्रवृत्ति का अनुभव होने के साथ ही मोहिनी के अन्तर्मन में विचार आया कि यहाँ रहना उचित नहीं है क्योंकि यहाँ भोजन–पानी व मकान की समस्या तो हल हो जायेगी लेकिन जिस उद्देश्य से घर से वृद्ध माता–पिता को छोड़कर एवं जेठानियों के वचनरूपी तीरों से व्यथित होकर निकले, उस की पूर्ति यहाँ कैसे होगी। इसी बात का चिन्तन करके उस बुढ़िया के आग्रह से एक–दो दिन रहकर यह कहकर रवाना हो गये कि हम जिस उद्देश्य से घर छोड़कर निकले हैं, उसकी पूर्ति होने के बाद हम आपकी सेवा में उपस्थित होने की भावना रखते हैं। आपने जो हमको आत्मीयता दी और तकलीफ उठाई उसके लिये क्षमा चाहते हैं। यह कहकर माँजी के चरण स्पर्श कर आगे बढ़ गये।

चलते–चलते जब दिन कम रह गया तो रास्ते में बनी एक धर्मशाला को देखकर दोनों ने वहीं ठहरने का विचार कर लिया और बुढ़िया ने अत्याग्रह से जो भोजन सामग्री साथ में बांधी थी उसको खोलकर भोजन किया। और फिर सामान को व्यवस्थित करके बैठ गये। तब मोहिनी ने सामायिक के उपकरण निकाले और गणेश को देती हुई बोलीं"पतिदेव ! अब आप यह मुँहपत्ती मुँह पर

बांधकर शर्ट आदि खोलकर यह चद्दर ओढ़ लीजिये ताकि हम सामायिक प्रतिक्रमण करके इस प्राप्त सुअवसर का लाभ उठालें।

मोहिनी की इस बात को श्रवण करके गणेश बोलेंप्रिये ! तेरी बात तो यथार्थ है पर मैं तो सामायिक प्रतिक्रमण क्या होता है उसको जानता ही नहीं हूँ। यह महामंत्र का ज्ञान व स्मरण भी अभी–अभी कर पाया हूँ। तब मोहिनी कहने लगींपतिदेव ! आपकी बात यथार्थ है। वहाँ हमारा सारा समय घर के कार्यों में ही निकल जाता था। आप तो जानते नहीं, पर मैं तो सब पीहर से सीखकर आई थी। फिर भी वहाँ एक दिन भी उस गोरखधंधे के आगे नहीं कर पाई। पर अब तो हमको हमारे महापुण्योदय से ऐसा सुअवसर प्राप्त हुआ है। इसका लाभ उठाने के लिए मेरा इतना ही निवेदन है कि सामायिक आपको मैं दिलाऊँगी और अड़तालीस मिनट के बाद वापिस मैं पलवा दूँगी। यही बात प्रतिक्रमण की, जिसका आत्मशुद्धि में बहुत बड़ा महत्त्व है। हम मानव हैं। जैन हैं और श्रावक कहलाते हैं। उसके कुछ नियमोपनियम होते हैं। जिनका पालन आवश्यक होता है और उनका पालन करते हुए यदि भूलवश या अज्ञानता से कोई दोष लग जाए तो उसका शुद्धिकरण विधिपूर्वक करने हेतु दोनों समय दिन–भर के पाप की शुद्धि हेतु देवसी, रात्रि सम्बन्धी पाप

की शुद्धि हेतु राई, पन्द्रह दिन में लगे पाप की शुद्धि हेतु पाक्षिक, चार महीने के पाप की शुद्धि हेतु चौमासी और वर्ष–भर के पाप की शुद्धि हेतु सांवत्सरिक प्रतिक्रमण, जिनका मूल नाम आवश्यक आराधना है, जो जीवन–साधना का मुख्य आधार है और साधु–साध्वी, श्रावक–श्राविका चारों तीर्थ के लिए अनिवार्य है।

इसमें सबसे पहले सब सावद्ययोग अर्थात् मन, वचन, काया से पाप– कार्य करने, कराने का त्याग करके समता भाव को धारण करते हुए फिर चउवीसत्थ अर्थात् हमारे परमोपकारी तीर्थंकर प्रभु, जिन्होंने दुःख से मुक्ति व सच्चे सुख की सिद्धि का मार्ग बतलाया, उनकी स्तुति करके फिर उनको वंदन करके फिर अपने पाप की शुद्धि हेतु प्रतिक्रमण करके उन दोषों की शुद्धि हेतु कायोत्सर्ग करना और फिर आगे जीवन–विकास के हेतु कुछ–न–कुछ प्रत्याख्यान अर्थात् संकल्प ग्रहण करना। यह प्रतिक्रमण का उद्देश्य है। हमारे भवों–भवों के पुण्योदय से हमको जैन धर्म प्राप्त हुआ है। उसकी सार्थकता तब ही है जब हम उसके आवश्यक नियमों का तो आराधन करें।

मोहिनी की बात सुनकर गणेश कहने लगाँप्रिये ! मुझे तो आज मालूम पड़ा कि तू केवल दिखने में ही भोली–भाली और सीधी–सादी दिखती है, पर तू तो वास्तव में बहुत ज्ञानी है। तेरी बातों को सुनने से मुझे

अपने–आप में यह अनुभव हो रहा है कि भले मैंने जैन कुल में जन्म ग्रहण किया, पर कुछ भी उसका ज्ञान नहीं है। इसलिए अब तो इस मामले में जैसा बतायेगी अथवा करेगी, वैसा ही मैं भी करूंगा। इसलिये अब किस समय क्या करना, वह समझाती जा ताकि वैसे ही अंतर श्रद्धाभाव से करता रहूंगा।

पतिदेव गणेश की बात को श्रवण करके मोहिनी कहती हैंपतिदेव ! सच्ची क्रिया का आधार तो श्रद्धा ही है। आप तो श्रद्धा के साथ में जिस समय वंदन करूं, जिस आसन से मैं बैठूं उस आसन से आप भी बैठ जाइये और एक बात का विशेष ध्यान रखना है कि मैं प्रतिक्रमण के पाठ बोलूं और उसमें जब मैं मिच्छामि दुक्कडं बोलूं तब आप भी मिच्छामि दुक्कडं का उच्चारण करें। इसका तात्पर्य है कि मेरे से कोई पाप हो गया हो तो वह पाप निष्फल हो। ऐसा कहकर वह विधिपूर्वक प्रतिक्रमण करने लगी और गणेश भी उसका अनुकरण करने लगा और मोहिनी ने पूरा प्रतिक्रमण सविधि सम्पन्न किया। फिर सामायिक पाल ली और अपने–आप में बड़ी शान्ति का अनुभव करते हुए गणेश बोलौंप्रिये ! आज जीवन में पहली बार ऐसी शान्ति का अनुभव हो रहा है। अब हमारे पुण्योदय से जो अवसर प्राप्त हुआ है उसमें अधिक से अधिक धर्म–ध्यान करना है। ऐसा कहकर दोनों निद्राधीन

हो गये। पुनः प्रातःकाल सूर्योदय के पहले उठ राई प्रतिक्रमण करके निवृत्त होकर आगे प्रस्थान की तैयारी करने लगे।

(9)

गणेश व मोहिनी ने सारा सामान एकत्रित किया और साथ में जो वृद्धा माँजी ने बांधा था उसमें से थोड़ा नाश्ता करके नवकार मंत्र का स्मरण करके दोनों ने आगे के लिए प्रस्थान किया। वहाँ से कुछ दूर पहुँचे ही थे कि आगे भयंकर अटवी आ गई। चारों तरफ घनी झाड़ियाँ और फिर उसमें कभी शेर दहाड़ते तो कभी हाथी चिंघाड़ते, कभी चीता, भालू, लोमड़ी आदि प्राणियों की आवाज से सारा वातावरण भयावह बना हुआ था। दोनों पति–पत्नी एक–दूसरे को धैर्य प्रदान करते हुए चल रहे थे।

इतने में अचानक भयंकर हवा का तूफान आ जाने से सारे जंगल में अंधियारा छा गया जिससे एक–दूसरे को आपस में न देखा ही जा सकता था, न एक–दूसरे की आवाज ही सुनी जा सकती थी। ऐसी स्थिति में जिसको जिस दिशा में जो पगडंडी मिली, उसी पर चल पड़े। हवा के तीव्र वेग के साथ चाल की गति भी तीव्र हो गई। और हुआ यह कि दोनों एक–दूसरे से बिछुड़ गये। लगभग चार–पाँच घंटे बाद वह तूफान

थोड़ा कम पड़ा जिससे सामने वाली वस्तु व रास्ता साफ दिखने लगा। तब थोड़ी मन में शान्ति हुई। पर दोनों एक–दूसरे को नहीं देखकर विचार में पड़ गये और लगे एक–दूसरे को आवाज लगाने। लेकिन एक राह में हों तो फिर भी देख–मिल सकते हैं। वहाँ तो दोनों की दिशा ही अलग हो गई थी। एक पूर्व और एक पश्चिम जैसी, जिससे और दुगुनी परेशानी पैदा हो गई। गणेश तो पुरुष था। उसके लिए केवल मोहिनी की ही चिन्ता थी।

पर मोहिनी के लिए तो पतिदेव की और साथ ही अपने शील की भी भारी चिन्ता थी। इससे चिन्तित होकर पूर्ण रूप से बड़ी भयभीत बनी हुई सहमी–सहमी–सी वन में मन को दृढ़ बनाकर बढ़ने लगी। इतने में सामने दृष्टि प्रसार कर देखा तो कुछ लोग अपने मुँह पर कपड़ा बांधकर हाथों में शस्त्र धारण किये हुए उसकी ओर ही आ रहे हैं। यह देखकर पहले तो मन में घबरा गई। फिर सोचा, घबराने से तो और बात बिगड़ सकती है। इसलिए वह अपने मन को दृढ़ बनाकर यह सोचने लगी कि मुझे डर किस बात का ? मेरे पास तो अपने रक्षा कवच के रूप में महामंत्र की महान शक्ति है। उसमें उसी समय एक ऐसी दिव्य शक्ति का संचार हुआ कि उससे वह बड़ी विचित्रता से विभिन्न आवाजों में महामंत्र का ऐसे जोर से उच्चारण करने लगी कि जिससे सारा जंगल गूंजने लग

गया। हवा से उसका सारा देह तो धूल–धूसर बन ही गया था, फिर सिर के सारे केश भी बिखर गये थे जिसके कारण ज्योंही यह आवाज डाकू दल के कान में पड़ी तो वे सब भयभीत हो गये, यह सोचकर कि यह तो वनदेवी है। कहीं हमारा अनर्थ नहीं कर दे इसलिये अब हमारे लिये श्रेयस्कर यही है कि इसको हम अपने पास जो भी है, भेंट चढ़ाकर खुश करके इसका आशीर्वाद प्राप्त करें। बस, यह सोचकर सब डाकुओं ने दूर से अपने पास जो भी धन चोरी करके लाये थे उसको पूरा का पूरा थोड़ी दूर पर ढेर लगा दिया और वहीं से साष्टांग प्रणाम करते हुए बड़े भयभीत होकर गिड़गिड़ाते हुए शब्दों में कहने लगेंधन्य हो, धन्य हो आज हमारे प्रबल पुण्योदय से आपके दर्शन हो गये। हम अज्ञानतावश आपकी इस सीमा में आंधी तूफान के कारण राह भटकने से आ गये। हम हमारी इस भूल की क्षमायाचना चाहते हैं। आप हमें क्षमा करके उसके बदले हमारी यह भेंट स्वीकार करें और हमको शुभाशीर्वाद दें। उन डाकुओं की इस बात को श्रवण करके पहले तो वह यह सोचकर कि कहीं यह नहीं जानलें कि यह तो देवी नहीं कोई अकेली स्त्री है इसलिये वह बड़ी धैर्यता के साथ पुनः अनेक किलकारियों और आवाजों के साथ महामंत्र का उच्चारण करने लगी जिससे वे और भयभीत होकर गिड़गिड़ाने लगे और क्षमा मांगने लगे और साथ ही विनय करने लगेंहे देवी ! यह भेंट स्वीकार करें।

तब मोहिनी ने आशीर्वाद की मुद्रा में अपना दाहिना हाथ ऊँचा कर लिया और जाने का इशारा कर दिया जिससे उनके मन में थोड़ा धैर्य बंधा। यह सोचकर कि वनदेवी ने हमारे अपराध को क्षमा करके जाने का इशारा कर दिया है। इसलिये मन में थोड़े हर्षित होकर पुनः नमस्कार करके सब माल वहीं छोड़कर उल्टे पैरों भागने लगे। इधर मोहिनी ने देखा कि कहीं वापस नहीं आ जाएं इसलिए उसने पुनः विचित्र किलकारियों के साथ सारे वन को गुंजा दिया जिसको सुनकर के तो वे इतने भयभीत हो गये कि मानों वह हमारा पीछा कर रही हो। इसलिए पूरी शक्ति लगाकर दौड़ने लगे और दौड़ते –दौड़ते वन पार होने के बाद ही शांति की सांस ली।

इधर मोहिनी ने भी देखा कि यह सब महामंत्र के स्मरण की ही शक्ति है कि आज इस विकट परिस्थिति में मैं इस महान संकट से बच गई। यदि कहीं इनके हाथों पड़ जाती तो न मालूम मेरी कैसी दुर्दशा हो जाती। वैसे महामंत्र की शक्ति पर तो पहले ही उसकी दृढ़ आस्था थी, अब आस्था और दृढ़ीभूत हो गई। अब उसने थोड़ी देर पूर्ण स्थिर योग से महामंत्र का स्मरण किया जिससे उसके मन में पुनः शांति का संचार हुआ। फिर अपने–आप को निर्विघ्न समझ कर उस धन के ढेर को देखा और एक कपड़े में बांधा और आगे चली।

कुछ दूरी पार करने पर वन की सीमा समाप्त होते ही एक पत्थर की बड़ी शिला वहाँ जमीन पर कुछ ऊँचाई पर दिखी। ठीक उसी के पास सुन्दर कल–कल करते बहता झरना, उसके पास में ही वृक्षावलियों से घिरा विशाल मैदान। इस प्राकृतिक ऐश्वर्य से सम्पन्न स्थान को देखकर मन आकर्षित हुए बिना नहीं रहा। इधर पूरी तरह से थक चुकी थी इसलिये वहीं विश्राम करने का निश्चय कर लिया।

थोड़ी देर बाद वहाँ पर बैठने के बाद सोचा कि कहीं पास में बस्ती हो तो वहाँ चली जाऊँ। पर मन उसका आगे जाने हेतु तत्पर नहीं हो रहा था। वह उसे वहीं रुकने की प्रेरणा दे रहा था कि यह स्थान तेरे विचारों को साकार रूप देने के लिए सर्वोत्तम है। इसलिये निर्भय बनकर महामंत्र की साधना करके उसीके संबल से यहीं पर कार्य प्रारम्भ करना ही श्रयेस्कर है।

इस प्रकार की मन में उठती आवाज को सुनकर मोहिनी ने भी वहीं रुकने का निश्चय कर लिया और चढ़ गई उस शिलापट्ट पर। फिर निहारने लगी चारों तरफ के दृश्य को, जो बड़ा रमणीक व मनभावन लग रहा था। इतने में उसकी दृष्टि शिलापट्ट के पीछे पड़ी तो देखा वहाँ एक छोटी–सी गुफा भी थी जिसमें आराम से बैठा और सोया भी जा सकता है। साथ ही यदि एक पत्थर

खिसका कर रख दिया जाय तो उसमें कोई हिंसक पशु भी प्रवेश नहीं कर सकता। साथ ही पास ही में एक विशाल वट वृक्ष भी था जिसका तना बहुत मोटा और भीतर से खोखला भी है। जिसमें भी समय पर घुसकर अपनी रक्षा की जा सकती है। फिर ऊपर की पहाड़ी पर देखा तो उसकी दृष्टि में कुछ किलोमीटर की दूरी पर ही एक विशाल नगरी भी दृष्टिगत हुई। इन सब बातों पर चिन्तन करके आखिर उसने अपने मन में यही दृढ़ निश्चय कर लिया कि अब यहीं रहना हर बात में लाभदायक है।

(10)

यह दृढ़ निश्चय मन में कर लेने के बाद पुनः पहाड़ी से नीचे उतरी और सबसे पहले इस गुफा की सफाई की और अपना सारा सामान उसमें व्यवस्थित रखकर फिर पास पड़ी हुई एक छोटी शिला को उठाकर लाई और गुफा के मुँह के सामने रखी जिससे ऐसा लगा मानो उसका दरवाजा ही बन गया। फिर वट वृक्ष के तने के भीतर जो खोखला इतना था कि उसमें आराम से छुपकर बैठा जा सकता था, उसकी भी सफाई की। उसके मुँह पर भी एक छोटी शिला रख दी। जिसको आधी खिसका (हटा) कर उसमें से निकला भी जा सकता था

और घुसा भी। इस प्रकार सारी व्यवस्था करके उसने अपने पास का लोटा निकाला और पास के बहते निर्मल झरने से कपड़े द्वारा छानकर पानी भर के लाई और जो–कुछ बचा था वह भोजन करने बैठी। लेकिन एक ग्रास भी गले नहीं उतरा।

उसकी आँखों से आँसू प्रवाहित होने लगे और सोचने लगीं"वाह रे भाग्य ! तेरे पर विश्वास करके तो हमने स्वतंत्र जीवन जीने का संकल्प लेकर घर–परिवार छोड़ा लेकिन आज बीच में ही तूने हम दोनों पति–पत्नियों में विछोह पैदा कर दिया। अब वो किधर और मैं किधर। इसकी खबर भी किसको कौन देगा ? और अब पुनः कब हमारा मिलन होगा ?

फिर मोहिनी ने पुनः मन में थोड़ा धैर्य धारण करके उसी महामंत्र का एकाग्रता से स्मरण किया तो उसके अन्तर्मन में एक दिव्य शांति का संचार हुआ और सोचने लगीं"जो होता है वह सब अच्छा ही होता है और अच्छा ही होगा। वियोग हुआ है तो पुनः मिलन भी होगा। आज विकट वन और भयंकर आंधी–तूफान से महामंत्र ने ही बचाया और सहज इतना बड़ा धन का ढेर प्राप्त हो गया। और जो अपने संकल्प के अनुरूप स्थान व साधन भी जो कुछ प्राप्त हो गया है तो अब इसी में अपना पूर्ण समर्पण करके सर्वचिंताओं से मुक्त बनकर आगे की

योजना में अपनी शक्ति को लगाना है। यह समस्या व संकट की घड़ी तो महासती दमयंती, अंजना आदि में भी आई थी। उन्होंने भी पूर्ण धैर्यता से इसी महामंत्र के संबल से पार की, तो मुझे घबराने की क्या आवश्यकता है। रही बात पतिदेव की, तो मैंने नारी होकर भी ऐसी हिम्मत धारण की है तो वे तो पुरुष हैं। मुझे पूरा आत्मविश्वास है कि यही महामंत्र उनकी भी रक्षा करेगा और एक दिन हमारा मिलन करायेगा।

ऐसा सोचकर उसने जैसे–तैसे मन को दृढ़ बनाकर थोड़ा बहुत भाया, वह भोजन किया और फिर पानी पीकर कुछ देर वहीं बैठी और उस प्राकृतिक दृश्य को निहारने लगी। और जब सूर्यास्त होने लगा तो उस गुफा में जाकर पुनः शिलापट्ट से उसका मुँह बंद करके सामायिक प्रतिक्रमण करके फिर महामंत्र का स्मरण करके अपने पतिदेव के प्रति शुभकामना भाकर सो गई। गहरी थकान के कारण निद्रा भी ऐसी आई कि प्रातः सूर्योदय के कुछ समय पहले ही एक विशिष्ट स्वप्न–दर्शन के साथ खुली, तो जल्दी से उठी और महामंत्र का स्मरण करके प्रभु–प्रार्थना में तन्मय हो गई। साथ ही उसी समय स्वप्न पर विचार करने लगी तो उसका मन–मयूर नाच उठा। और कहा कि मेरा हर मनोरथ इसी जगह सफल होगा। इसलिये मुझे कुछ जप–तप का अनुष्ठान करना

श्रेयस्कर है। इसका निश्चय करके फिर अनुमान से सामायिक का समय पूर्ण हुआ जानकर पाल ली और फिर देव, गुरु, धर्म को विधिवत् वंदन करके अपने पतिदेव गणेश के प्रति शुभकामना करके गुफा का द्वार खोलकर पुनः व्यवस्थित करके शौच निवृत्ति हेतु गई और उससे निवृत्त होकर पुनः उसी स्थान पर आ गई। अब आज खाने को तो कुछ पास में रहा नहीं। इससे सोचा कि क्यों नहीं आज सहज योग मिला है तो कुछ तपस्या करली जाय। ऐसा सोचकर उपवास पच्चख कर उसी शिलापट्ट पर ध्यान में बैठकर महामंत्र का पूर्ण एकाग्रता से स्मरण करने लग गई।

(11)

करीब एक घंटे तक ध्यान–साधना के बाद जब आँख खोली तो देखा सामने कुछ मयूरों ने नृत्य करते–करते अपने पंख छोड़ दिये और अपने–आप को हल्का महसूस करके उड़ गये। उन पंखों के ढेर को देखकर मोहिनी उठी और उन मयूरपंखों को एकत्रित करके गुफा में रख दिया और बैठकर उनकी एक टोकरी व पंखा बना लिया जो दिखने में बड़े मनमोहक लगने लगे। उनको एक तरफ रखकर वह पुनः ध्यान में बैठ गई और उसी मन की एकाग्रता से महामंत्र का स्मरण करने लगी।

इतने में वहाँ एक ग्वाला अपने पशुओं को झरने में पानी पिलाकर वापिस जाने लगा तो अचानक उसकी दृष्टि मोहिनी पर पड़ गई। ज्योंही उसने देखा तो वह हतप्रभ हो गया और टकटकी से उसकी ओर देखकर सोचने लगा कि हो–न–हो यह तो इस वन की देवी है। पहले तो एक बार मन में भयभीत हुआ। परन्तु फिर सोचने लगा कि मैंने लोगों के मुँह से सुना है कि प्रबल भाग्योदय होता है उसको देव–दर्शन होते हैं। लगता है आज मेरे भाग्योदय से इस वनदेवी के दर्शन हुए हैं। इसलिए यदि मैं इससे भयभीत होकर भाग जाऊँ तो यह रुष्ट होकर कहीं अनिष्ट भी कर सकती है। और यदि इसकी भक्ति करूं तो यह प्रसन्न होकर मेरा उद्धार भी कर सकती है।

ऐसा मन में विचार करके पूर्ण धैर्य धारण कर पहुँच गया शिलापट्ट के पास और अन्तर्मन से नमस्कार करके कहने लगाँहे भगवती, आज मेरे महान पुण्योदय से महान कृपा करके मुझ दीन–दुःखी, अनाथ, असहाय बालक को इस वन में आपने दर्शन दिये। आज मैं धन्य हो गया हूँ। मातेश्वरी मुझ पर दया कर। इस दुनिया में मेरा कोई नहीं है। मेरे माता–पिता बचपन में ही मर गये और परिवार वालों ने मेरी जमीन–जायदाद सब हड़प करके घर से निकाल दिया। अब मैं पास ही की नगरी

रत्नपुरी में जीवनयापन करने सेठों के घरों की गायों को वन में चराकर पुनः शाम को उनको ले जाकर सौंप देता हूँ और बदले में जो–कुछ खाने–पहनने को दे देते हैं उससे जीवन निर्वाह करता हूँ।

अब हे जगदम्बे ! आज तूने दर्शन देकर मुझे धन्य कर दिया। अब मैं तेरी शरण में हूँ, अब मुझे तेरा ही आधार है। हे दयानिधे, इस भोले अनाथ बालक पर करुणा कर। इस प्रकार बोलता–बोलता वह जोर–जोर से फूट–फूट कर रोने लगा। अचानक इस प्रकार उसकी सारी बात और रोने की आवाज सुनकर मोहिनी ने अपनी आँख खोली तो उसका हृदय दयार्द्र हो उठा। उसके चेहरे की सहज सौम्यता–सरलता को देखकर उसने उसको उठाया और उसके आँसू पोंछते हुए बोलीं"वत्स अब रो मत। तेरा भाग्योदय होने वाला है। पर उसके लिए तेरी मैं अनेक तरह से परीक्षाएँ लूंगी किसी–न–किसी काम के माध्यम से, जिसको तू किसी को बिना बताए करके मेरे मन में विश्वास पैदा कर देगा तो फिर तेरे सब दुःख समाप्त होने में कोई देरी नहीं लगेगी। बोल, क्या तेरी तैयारी है ?

इस बात को सुनते ही तो वह पुनः अपना मस्तक चरणों में झुकाकर फूट–फूट कर रोते हुए कहने लगा"हे मातेश्वरी ! तू मेरी चाहे जैसी परीक्षा ले लेना, मेरा

तन–मन सब तुम्हारे चरणों में समर्पित है। चाहे मेरा सिर भी काटे तो कटा लूंगा और कभी किसी के सामने यह बात प्रकट नहीं करूँगा। बस, आप मेरा उद्धार कर दें। मोहनी ने भी उसका नाम पूछते हुए कहाँभैया अब तू निश्चिन्त हो जा। मैं अवश्य तेरे दुःख को दूर करूँगी। बस, अब ठीक इसी समय प्रतिदिन आना है। मैं यहीं पर तुझे दर्शन देऊँगी।

तब पुनः उसने उसके चरणों में मस्तक झुकाया और बोलाँहे मातेश्वरी ! मेरा नाम धन्ना है। अब मेरे पर कृपा करना। मैं प्रतिदिन इसी समय तेरी सेवा में हाजिर होऊँगा। यह कह कर वह पुनः मस्तक झुका कर देखने लगा। तब मोहिनी ने उस धन्ना के चेहरे को निहारा तो उसे विश्वास हो गया कि वास्तव में यह निश्छलहृदयी है। इससे मेरे संकल्प को साकार करने में बहुत बड़ा सहयोग मिल सकता है। ऐसा मन में निश्चय करके बोलाँबेटा ! अभी तुझे जाने की जल्दी तो नहीं है ? यदि जल्दी न हो तो एक कार्य आज करके आजा। कितनी दूर है यहाँ से रत्नपुरी नगरी ?

धन्ना यह बात सुनकर हर्षविभोर होकर कहने लगाँमातेश्वरी ! मेरे काम ही क्या है ? वैसे ही दिन–भर इसी वन में ही गायें लाकर छोड़ देता हूँ। फिर कहीं ठंडी छाया में बैठे–बैठे दिन पूरा करके संध्या होते–होते शहर

में पहुँच जाता हूँ। जो यहाँ से करीब दो कोस (पाँच किलोमीटर) के आस–पास ही है। आप तो फरमाइये मेरे लिए सेवा कार्य। मैं अभी करके वापस आ जाता हूँ। तब मोहिनी ने उसको वह मयूर पंख वाली टोकरी और पंखा दिया और बोलीं इनको लेजाकर राजमहल के पास जाकर आवाज लगाना कि यह देवी प्रदत्त टोकरी और पंखा कोई लेना चाहे तो ले सकता है। उसके बाद उसके बदले जो–कुछ दे वह किसी को बिना बताए लेके आ जाना।

(12)

धन्ना तत्क्षण मोहिनी द्वारा प्रदत्त टोकरी व पंखा लेकर बड़ी–बड़ी सेठों की हवेलियों के पास आवाज लगाता हुआ कहने लगौं लो कोई देवी प्रसाद मयूर टोकरी और पंखा। जिसकी मधुर सुरीली आवाज सुनकर एक बार तो बड़ी–बड़ी सेठानियें भी अपनी हवेली के बाहर आकर उन दोनों वस्तुओं को देखकर आश्चर्य करके लेने को तत्पर हो जाती लेकिन धन्ना तो रुका ही नहीं और सीधा देवी के निर्देशानुसार आगे बढ़कर राजमहल में पहुँच गया और वहीं आवाज लगाने लगा जिसको सुनकर महारानीजी भी प्रभावित हो गई और देखते ही तो उन्होंने ऊपर से एक दासी को नीचे भेजकर उन दोनों वस्तुओं को ऊपर मंगवाया। तब धन्ना उसको देने के साथ ही

बोला कि जंगल में देवी के प्रसाद के रूप में प्राप्त हुई हैं। इसके बदले जो आप देना चाहें वो दे दो। मैं उसको उनके स्थान पर रख दूंगा। यह सारी बात सुनकर दासी दोनों वस्तुओं को लेकर रानी के पास में पहुँची और उनके हाथों थमा दी और धन्ना की कही हुई सारी बात बता दी।

ज्योंही रानीजी ने उसको देखा तो आश्चर्य में पड़ गई और सोचने लगींवास्तव में देवी प्रदत्त ही लगती हैं क्योंकि ऐसी कलाकारी मनुष्य की तो नहीं हो सकती है। हो–न–हो दोनों वस्तुएँ चमत्कारी लगती हैं। इसलिये इनको रख लेने से देवी–कृपा से कुछ लाभ ही लाभ हो सकता है। ऐसा सोचकर एक नीला और एक पीला पत्थर कपड़े में बांधकर दासी के साथ भेज दिया और बोलींउसे कह देना कि यह मेरी तरफ से देवी को भेंट चढ़ा देना। और भी तुझे कोई चीज प्राप्त हो उसे ले के आना।

यह बात सुनकर धन्ना ने वापिस दासी को कहा कि महारानीजी को कहना कि देवी ने ये बातें गुप्त रखने का निर्देश दिया है। साथ ही यह भी कहा है कि इसको गुप्त रखने पर ही इसका चमत्कार मिल सकता है। अन्यथा वे लुप्त भी हो सकती हैं। दासी धन्ना की सारी बात सुनकर पुनः महल में पहुँची और सारी बात रानी को बता दी और धन्ना जल्दी में पुनः जंगल की ओर रवाना हो गया और पहुँच गया उसी स्थान पर।

लेकिन देखता क्या है कि पशु तो सब वहाँ सुरक्षित खड़े हैं पर देवी के दर्शन नहीं हो रहे हैं जिससे उसका मन बेचैन हो उठा और जोर–जोर से आवाज लगता हुआ कहने लगाँहे जगदम्बा ! तू कहाँ चली गई। मैं तेरी आज्ञा का पालन करके आ गया हूँ। कुछ विलम्ब हो गया आने में इसलिए तू मुझे क्षमा कर दे। मेरे से मत रूठ, जल्दी से प्रगट होकर दर्शन दे। तेरे सिवा मेरा उद्धार ही कौन करने वाला है। तेरे बिना अब मेरे जीवन का आधार व सहारा ही कौन है। इसलिए अब तू प्रगट होकर तेरी चीज को संभाल। महारानी ने तेरे को यह भेंट चढ़ाने हेतु जो दी है वह इसी में है। मैंने खोलकर भी नहीं देखी। जैसी दी, वैसी की वैसी तुझे भेंट कर रहा हूँ। यह कह कर उसने वह कपड़े में बंधी हुई पोटली रख दी और फूट–फूट कर रोते हुए पुनः अर्ज करने लगाँहे मातेश्वरी ! तू प्रगट होकर दर्शन दे और इसे संभाल।

धन्ना की इस आर्त पुकार को कानों से सुनकर वृक्ष के तने में बैठी मोहिनी सब–कुछ आँखों से देख रही थी लेकिन वह उसको नहीं देख पा रहा था। फिर उस रहस्य को अभी गुप्त रखना ही हितकर समझकर उसने विपरीत दिशा में मुँह करके पहले तो अपने मुँह से घुंघरू की आवाज निकाली जिसको सुनकर धन्ना को यह विश्वास हो गया और सोचने लगा कि अब देवी प्रगट हो

रही है। इसी आशा में टकटकी लगाकर चारों दिशाओं में अपनी दृष्टि पसारने लगा। लेकिन देवी तो दिखाई नहीं दी पर घुंघरू की आवाज तो गूंज रही है। इतने में आकाश में आवाज गूंजीं'वस्त ! तू आर्त मत हो, मैं तेरे से प्रसन्न हूँ। तू इसको यहीं रखकर चला जा और कल तू अवश्य यहीं आना। अभी तेरे हाथ से बहुत बड़े–बड़े कार्य कराने हैं। इसलिये कल जरूर आना और सारी बातें गुप्त रखना मत भूलना। यह अदृश्य आवाज सुनकर उसका मुरझा मन खिल उठा, हर्षित होकर देवी की आज्ञानुसार उस पोटली को वहीं रखकर पुनः शीश झुकाया और जो आज्ञा कहकर गायों को लेकर रवाना हुआ और रत्नपुरी के मौहल्ले में जाकर सबकी गायों को उनके मालिकों को संभला दी और जो–कुछ खाने को दिया वह खाकर प्रतिदिन के नियम अनुसार चबूतरे पर रखी बोरियों को बिछाकर सो गया। पूरे दिन का थका होने से थोड़े समय में ही देवी–दर्शन का चिन्तन करते–करते गहरी नींद में सो गया।

(13)

पुनः प्रातः जल्दी उठा और देवी का स्मरण करके अंतःमन से उसको नमन करके जल्दी से सेठों के घरों से गायों को खोलकर सबको इकट्ठी करके लाने लगा।

प्रतिदिन के जैसे प्रातः नाश्ते में सेठानियों ने जो भी दिया, उसको लेकर जंगल की ओर रवाना हो जाता और वहीं गायों को चराते हुए जब भी भूख लगती तब खा लेता। लेकिन आज उसको आश्चर्य हुआ कि सब सेठानियों ने आज विशेष रूप से तरह–तरह की मिठाई, नमकीन, फल वगैरह दिये। साथ में पूड़ी–सब्जी भी। क्योंकि कल त्यौहार था। सबके यहाँ से थोड़ा–थोड़ा करके उसके पास कई तरह की मिठाई और फल हो गये जिनको उसने अपने थैले में डाला और यह चिंतन करते हुए गायों को लेकर जंगल की ओर रवाना हो गया और सोचने लगा कि आज यह सब पहले देवी के भोग लगाकर फिर ही मैं खाऊँगा। ऐसा सोचकर जल्दी–जल्दी गायों को हांकता हुआ उसी स्थान पर पहुँच गया।

और जल्दी से ढाक के पत्तों की पत्तल बना कर लाया और सारी सामग्री को निकाल कर उसमें जमा दिया। फिर जहाँ मोहिनी शिलापट्ट पर ध्यान मुद्रा में बैठी थी उस जगह आया और देवी के चरणों में झुक कर प्रार्थना की और वह सामग्री से सजी पत्तल सामने रखी और कहने लगाँहे मातेश्वरी ! आज मेरा प्रण है कि यह मिष्टान्न, फल, भोजन सामग्री, आज आपकी कृपा से ही जीवन में पहली बार प्राप्त हुई है इसलिये पहले आपका भोग लगने के बाद ही उस बचे हुए प्रसाद को मैं

खाऊँगा। इसलिए मेरी अर्ज स्वीकार करने की कृपा करके आप भोग लगाइये। ऐसा कहकर जोर–जोर से रोने व गिड़गिड़ाने लगा। उसको इस प्रकार रोते–गिड़गिड़ाते देखकर मोहिनी का हृदय भी द्रवित हो उठा और मन में सोचने लगीं यह ईमानदार और पूर्ण निष्ठावान है इसलिए अब इसको देवी के भ्रम में न रखते हुए इसे अपना धर्मभाई बनाकर इसी के सहारे से आगे की योजना बनानी चाहिए। क्योंकि उस उद्देश्य की पूर्ति हेतु धन की तो कोई कमी नहीं है। इतना धन तो उन डाकुओं का मिल गया और अब ये दो रत्न और मिल गये जो भी बहुत कीमती हैं और आवश्यकतानुसार धन तो मयूर पंख की टोकरी और पंखे के समान और वस्तुएँ बनाकर इसके माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है।

इसलिये अब इसको ज्यादा भ्रमित नहीं रखते हुए आत्मीयता से अपनाने में ही सार है। यह निश्चय करके मोहिनी ने अपने चेहरे पर मंद मुस्कान बिखेरते हुए एक धागा हाथ में लिया। धन्ना के हाथ में बांधते हुए बोलीं भैया आज से तुम मेरे भाई हो और मुझे आज से तुम देवी नहीं समझकर अपनी बहन समझना क्योंकि मैं बड़ी विपत्तियों को झेलकर इस जंगल में आई हूँ। ऐसा कहकर आँखों में अश्रु बहाती हुई उसने सारी बीती बातें सुनाई और कहने लगी इस वन में तुम जैसे भाई को पाकर मुझे

मन में कुछ शांति का अनुभव हुआ है। अब तुम भी मुझे सगी बहिन समझकर मेरा साथ दो। ताकि एक–दूसरे के सहयोग से मेरा व तुम्हारा भाग्य खिले और इन दुःखों से मुक्ति पाकर अपन सुखद जीवन जी सकें। इसलिए आ, आज दोनों भाई–बहिन एक साथ बैठकर भोजन करेंगे। ऐसा कहकर अपने हाथ से धन्ना के मुँह में ग्रास दिया और फिर दोनों ने साथ बैठकर भोजन किया तथा मोहिनी के तेले का पारणा हुआ।

मोहिनी के इस व्यवहार से तो धन्ना भावविभोर हो गया और बोलाँ बहिन, आज मुझे ऐसे हर्ष और आनन्द का अनुभव हो रहा है कि मुझे तेरे जैसी बहिन ही क्या मिली मानों जन्मदात्री माता ही मिल गई। मैंने इस जीवन में अभी तक गालियाँ सहते हुए तिरस्कारमय जीवन ही जीया है। आज पहली बार माँ की ममता और बहिन–सा प्यार तुमने दिया है तो मैं भी यह वचन देता हूँ कि मुझ अनपढ़ को आप जो आज्ञा देंगी उसीके अनुसार सारा कार्य करूँगा। साथ ही प्राण जाने पर भी किसी को कोई बात नहीं बताऊँगा। बस, बहिन तुम मुझे अपना छोटा भाई अथवा बेटा समझकर अपना लेना, छिटकाना मत। ऐसा कहकर अश्रु बहाता हुआ मोहिनी के चरणों में झुक गया। तब मोहिनी ने भी उसको अपनी छाती से चिपकाकर उसकी आँख के आँसू पोंछे। और फिर बोलीं भैया, यह तो

मेरे मन में तुझे पहली बार देखने पर ही अंतर् विश्वास हो गया था जो आज यथार्थ रूप में प्रकट होकर रक्षाबन्धन के रूप में परिणत हुआ है। इसलिये अब यह मन में दृढ़ विश्वास बना लो कि अब हमारे दुःख के दिन हटने वाले हैं और सुख के दिन प्रकट होने वाले हैं। जिसमें कुछ देर हो सकती है पर अंधेर नहीं। बस, उसके लिये थोड़ा पुरुषार्थ तो करना ही होगा।

इसीलिए अब हमको सारा कार्य इस ढंग से करना होगा कि अपन दो के अलावा तीसरे को कुछ भी ज्ञान न हो। और मैं जैसे कहूं और करूं वैसे करते जाना और मेरा सहयोग देते जाना। बस, इतनी सी बात का पूरा ध्यान रखने की आवश्यकता है। मोहिनी की इस बात को सुनकर धन्ना अपनी पूर्ण श्रद्धा–आस्था के साथ बोलौंबहिन ! मैंने आपको पहले ही वचन दे दिया है और पुनः वचन देता हूँ कि यह रहस्य प्राण जाने पर भी किसी के सामने प्रगट नहीं हो सकेगा। बस, मेरे लिए तो अब सिर्फ आपका आदेश–निर्देश है वही सब–कुछ है।

(14)

इस प्रकार धन्ना के वचन सुनकर दृढ़ आत्मविश्वास के साथ मोहिनी बोलीदेख धन्ना, मैं स्त्री हूँ। तू जानता ही है कि स्त्री का जीवन बड़ा विचित्र है। थोड़ी–सी लापरवाही से अनेक संकट घेर सकते हैं। साथ ही अपने भाई–बहन

के रिश्ते में भी ऐसे साथ रहने से कई लोग कितनी ही तरह की शंका पैदा कर सकते हैं। इसलिये अब मैंने आगे की योजना बनाने के लिए पुरुष वेश धारण करने का निर्णय लिया है। और परिचय भी सेठ मोहनलाल के नाम से दूंगी और तू भी मुझे सेठ मोहनलालजी के नाम से ही पुकारना। और अंतरंग रहस्य को कभी प्रगट मत होने देना। तब धन्ना बोलौंमैं तो एक बार आपको अपना जीवन सौंप चुका और वचन दे चुका हूँ कि मेरी तरफ से आपकी बात कहीं बाहर नहीं जायेगी। बस, मेरे लिये आपकी आज्ञा ही सब–कुछ है।

अब मोहिनी को धन्ना की बात पर पूर्ण विश्वास हो गया। तब वह उठी और अपने पतिदेव के जो वस्त्र थे उनको ऐसे ढंग से धारण किया कि सचमुच में हूबहू पुरुष ही लगने लगी। साथ ही हावभाव भी कोई चतुर से चतुर व्यक्ति भी यह नहीं जान सके कि यह पुरुष है या स्त्री। फिर उसने चोरों द्वारा प्राप्त जो जेवरात थे उनको एक–एक करके देखा तो उनमें भी एक दिव्य रत्न निकल गया। उसको व रानी द्वारा मिले दोनों रत्नों को व्यवस्थित करके साथ में लिया और बाकी सारे सामान को व्यवस्थित करके बाहर से इस ढंग से चक्कर लगा कर आई कि धन्ना को भी उस गुप्त स्थान का जरा भी पता नहीं पड़ा।

जब मोहिनी पुरुष वेश में सामने आकर खड़ी हुई तो एक बार तो धन्ना भी आश्चर्य में पड़ गया। फिर सारी

बात समझ में आई तब बोलीं बहिन, तुमने तो कमाल कर दिया। मैं तो पहचान ही नहीं सका। तब मोहिनी ने कहींदेख धन्ना अब तू मुझे रत्नपुरी का रास्ता थोड़ी दूर चल कर बता दे और मैं नहीं आऊँ तब तक तू यहीं रहना और यदि कुछ देर हो जावे तो तू गाँव में जाकर कल वापस आ जाना। इस बात को सुनते ही धन्ना ने कुछ दूर साथ चलकर रत्नपुरी का रास्ता बता दिया और पुनः जंगल में आकर उस स्थान व गायों की देखभाल करता हुआ वृक्ष की छाया में बैठ गया और इंतजार करने लगा अपनी बहिन का।

इधर धन्ना के बताये मार्ग से मोहिनी रत्नपुरी के बाहर पहुँच गई और वहाँ से पूछताछ करके सीधी जौहरी बाजार में आ गई और निहारने लगी जौहरियों की पेढ़ियों को। जब एक जौहरी की दृष्टि पड़ी तो उन्होंने मुनीमजी को संकेत किया कि देखो, वो कौन है और क्या चाहते हैं ? उनको स्वागत के साथ पेढ़ी पर बुला लाओ। मुनीमजी सेठजी के इशारे को समझकर उठे और पेढ़ी के नीचे उतर कर पास में आये और बोलेंपधारिये पेढ़ी पर और फरमाइये हमारे लायक सेवा कार्य।

तब मोहिनी (सेठ मोहनलाल के रूप में) मुनीमजी के आग्रह से पेढ़ी पर चढ़ी और बड़े आदर के साथ वहाँ बिछे गादी–तकियों पर बैठ गई। तब जौहरी ने पूछेंआपका

कहाँ से किस कार्य हेतु पधारना हुआ है ? साथ ही अपना शुभनाम व परिचय भी बताने का कष्ट करें। तब मोहिनी बोलीमैं कंचनपुर निवासी हूँ। मेरा नाम मोहनलाल है और कुछ जवाहरात बेचने हेतु आया हूँ। यह कहकर उसने सबसे पहले अपनी जेब से वही चोरों के माल से मिला रत्न निकाला और बोलेपहले तो यह बताइये कि यह कौनसा रत्न है, फिर इसका मूल्य।

जौहरी ने वह रत्न हाथ में लिया तो आश्चर्य करने लगा और बोलेसेठ साहब यह तो वैडूर्य मणि है और मेरे हिसाब से यह पाँच लाख की है। यदि आप चाहें तो मैं पाँच लाख मैं खरीद सकता हूँ। जौहरीजी की बात को सुनकर मोहिनी बोलेऔर सोच कर बोलिये। तब जौहरीजी बोलेपाँच लाख तो मैं दे सकता हूँ और यदि इससे ज्यादा हो तो आप और इसका परीक्षण कराके निर्णय ले सकते हैं। जौहरीजी की बात को सुनकर सेठ मोहनलाल (मोहिनी) बोलेआपका कहना यथार्थ है। कष्ट के लिए क्षमा करें। यह कहकर वहाँ से उठकर और चार–पाँच दुकानों पर पहुँचे। वहाँ भी उसका परीक्षण कराया तो एक जौहरी ने उसको छः लाख में खरीदने की बात कही। आखिर उसी को बेच दिया। उस छः लाख की रकम को व्यवस्थित करके बोलेएक बग्घी बुलवाइये। और उसमें बैठकर नगरी के बाहर आये और बग्घी वाले

से बोलेंक्या भाई यहाँ कोई तुम्हारे ध्यान में अच्छा स्वतन्त्र मकान इत्यादि हो तो बताओ ताकि उसको किराये पर ले कर रह सकूं।

वह बग्घी वाला भी बड़ा सज्जन था। उसने कहाँसेठ साहब, यहाँ अनेक मकान खाली पड़े हैं, चलिये मैं बता सकता हूँ। उसने साथ चलकर कुछ मकान बताए जिनमें से एक मकान, जो सब तरह से स्वतंत्र और उस स्थान से भी नजदीक और सब तरह से सुरक्षित होने से पसंद आ गया और किराया तय करके उसकी चाबी ले ली और एक सुरक्षित गुप्त स्थान देखकर उसमें सारी रकम व्यवस्थित करके बग्घी वाले के पास आये और बोलेंभैया, आपका परिचय तो बताया ही नहीं।

तब बग्घी वाले ने अपना नाम रामू बताते हुए कहाँमैं भी यहीं पास की बस्ती में रहता हूँ। जब भी आप याद करें, मैं सेवा में तैयार हूँ। तब सेठ मोहनलाल ने कहाँभैया, बात ऐसी है कि मैं तो यहाँ के लिये बिल्कुल नया हूँ इसलिए काम तो पड़ता ही रहेगा। इसलिए बस तुम इतना ही ध्यान रखना कि जब भी तुम शहर में जाओ तो इधर होके निकल जाना ताकि जब भी काम होगा, बता दूंगा। ऐसा कहकर उसको किराये के साथ पाँच रुपये इनामस्वरूप दिये, जिससे वह बड़ा खुश हुआ और अब तो प्रतिदिन जब भी शहर में जाने का काम पड़ता तो उधर

से होकर निकलता।

(15)

इधर सेठ मोहनलाल मकान को पूरा बंद करके चाबी साथ लेकर पुनः उसी रास्ते से चल कर उसी स्थान पर पहुँचे। इधर धन्ना इंतजार कर ही रहा था। ज्योंही नजर पड़ी तो वह दौड़ कर आया और पावों में पड़ कर बोलौंआपको कोई कष्ट तो नहीं हुआ ? फरमाइये अब मेरे लिए क्या आज्ञा है। उसी समय सेठ मोहनलाल ने कहौंधन्ना, ठहर थोड़ी देर। मैं आवश्यक कार्य से निवृत्त होकर आता हूँ तब तक तू एक बार गायों को संभाल ले। धन्ना जो आज्ञा कहकर गायों को संभालने चला गया और मोहिनी उस गुफा में गई और सारा सामान एकत्रित करके, बांधकर उस शिलापट्ट पर रख दिया और आवाज लगाईंधन्ना, ओ धन्ना।

धन्ना ने ज्योंही आवाज सुनी, दौड़कर आया और बोलौंफरमाइये क्या हुक्म है। तब बोलौंदेख, गायों को रवाना करदे ताकि ये धीरे–धीरे आगे बढ़ेंगी तब तक अपन आगे चलते हैं, यह सामान लेकर। धन्ना बोलौं गायों की तो कोई चिन्ता नहीं है, ये तो मेरे साथ नहीं होने पर भी सब अपने–अपने घरों में अपने–आप चली जाती हैं। मैं तो सिर्फ अपनी जवाबदारी से मुक्त होने हेतु उनको चेताने के लिए जाता हूँ। इसलिए चलिये आप तो और दे

दीजिये सामान मुझे।

धन्ना सारा सामान उठाकर सेठ मोहनलाल के साथ चल कर नगर के बाहर आया और उनके पीछे–पीछे उस मकान पर आया और सेठ मोहनलाल ने जेब से चाबी निकाली और मकान का दरवाजा खोलकर दोनों अंदर गये और सारा सामान भीतर रखवा दिया। और बोलेंधन्ना, अब हमको इसी मकान में रहना है। इसलिए अब ये गायें वगैरह सब अपने–अपने मालिकों को संभला देना और कह देना कि मुझे सेठ मोहनलालजी ने अपने यहाँ काम पर रख लिया है। इसलिये अब मैं उनकी सेवा में ही रहूंगा। इसके अलावा इस मकान आदि की किसी को कुछ भी जानकारी मत देना।

धन्ना ने सारी बात सुनकर कहा कि सेठजी, मैं अभी गायों को संभला कर आ जाता हूँ। यह कहकर मकान आदि का रास्ता ध्यान में रखकर चला गया और सबको अपनी–अपनी गायें संभलाकर बोलाँअब मैं आपकी गायें चराने हेतु नहीं ले जाऊँगा। यह कहकर अपने कपड़े व सोने, बिछाने के कपड़े लेकर अन्य किसी की कुछ भी बात बिना सुने ही चलकर आ गया और बोलाँअब फरमाइये, मेरे लायक सेवाकार्य।

तब सेठ मोहनलाल ने कहाँदेख, अभी तो बाजार से एक पानी की मटकी, झाड़ू और किसी ढाबे से अपने

दोनों के लिये भोजन सामग्री ले के आजा। यह कहकर उसको पाँच रुपये का नोट पकड़ा दिया। जिसमें से धन्ना ने एक मटकी, झाड़ू और भोजन खरीद कर बाकी पैसे व्यवस्थित करके, लाके संभला दिये। फिर झाड़ू लेकर सारे मकान की सफाई करके सुरक्षित रख दिये और एक बाहरी कमरा, जिसमें धन्ना के सोने–बैठने की व्यवस्था कर दी और बाकी सब कमरे बंद कर दिये। उसके बाद दोनों ने भोजन किया और बाद में सूर्यास्त के साथ ही धन्ना को सारी भोलावन देकर दरवाजा बंद करके सामायिक प्रतिक्रमण किया और थक जाने से सो गई। प्रातः जल्दी उठकर सामायिक प्रतिक्रमण से निवृत्त हुई और धन्ना को कुछ रुपये देकर भोजन सामग्री व आवश्यक सामान की सूची बनाकर बोलीं"तू जाकर यह सब सामान खरीद कर ले आ।

(16)

धन्ना उस सूची को लेकर सीधा अपने जाने–पहचाने सेठजी की दुकान पर पहुँचा और बोलाँसेठ साहब यह सारा सामान, बर्तन आदि जल्दी से जल्दी तैयार कराइये। और ईमानदारी से इसका मूल्य बता दीजिये और देखिये कि यदि हमारे सेठजी को आपकी ईमानदारी महसूस हुई तो फिर जो सामग्री चाहिये मैं

आपकी दुकान से ले जाऊँगा। यह बात सुनकर सेठजी बोलेंधन्ना, तू भी कैसी बात करता है ? इतना समय हो गया, क्या हम पर विश्वास नहीं। धन्ना बोलाँसेठजी मुझे तो विश्वास है, लेकिन मेरे सेठजी को तो विश्वास होना चाहिये ना।

तब सेठ बोलाँकौन तेरा सेठ ? क्या जिनकी गायें चराता है वो ? यह सुनकर धन्ना बोलाँसेठजी, क्या मैं जिंदगी–भर गायें ही चराता रहूंगा। कल से ही मैंने गायें चराना बंद कर दिया और कंचनपुर के एक सेठजी, जो यहाँ नये आकर बसे हैं, उन्होंने दया करके मुझे अपनी सेवा में रख लिया है।

इतने में सेठजी ने सारा सामान तैयार कर दिया। धन्ना ने बिल लिया और रुपया चुकाकर शेष रुपयों को संभालकर सारा सामान एक ठेले गाड़ी में भरके लेके आ गया और मकान के भीतर रखकर ठेले वाले को पैसे देकर रवाना किया। फिर सारे सामान व बर्तनों को व्यवस्थित करके, देखकर डिब्बों में भर दिया और रसोईघर का रसोईघर में, बाकी सब यथास्थान सेठ मोहनलाल के निर्देशानुसार व्यवस्थित कर दिया। खाली घर भर गया, एक सद्गृहस्थ के गृहवास की तरह। उस मकान में सहज दो विभाग बन गये। भीतरी भाग में तो मोहिनी ने अपने लिए सारी व्यवस्था कर दी ताकि दरवाजा बंद करते

ही अन्दर क्या हो रहा है, कोई नहीं देख सकता। बाकी भोजन बनाने, खाने की, बैठने–उठने की सारी व्यवस्था बाहर के हिस्से में धन्ना के जुम्मे कर दी।

धन्ना यों तो दिखने में भोला लगता पर रसोई आदि कार्यों में कुशल था और मोहिनी के निर्देशानुसार और कुशल हो गया। बस, अब मोहिनी भीतर बैठी ही सारी निगरानी करती रहती। धन्ना एक खिड़की से खाना पहुँचा देता और बाहर बैठा सारे कार्य निवृत्त करता हुआ सारे घर की देख–रेख करने लगा। मोहिनी ने भीतर बैठे–बैठे जो जरी, किनारी, रेशम का वस्त्र मंगाया था उसके द्वारा कलात्मक कंचुकी तैयार की और धन्ना को देकर कहा कि इसको भी उसी तरह आवाज लगता हुआ राजभवन जाना और कहना यह देवी प्रदत्त कंचुकी है। उसने वह कंचुकी ली और सीधा राजभवन के पास जाकर आवाज लगाई। ज्योंही वह आवाज महारानीजी के कान में पड़ी, वो झरोखे में आई और देखा कि यह तो वही लड़का है। तुरन्त दासी को बुलाकर नीचे भेजी। दासी भी महारानीजी की आज्ञा शिरोधार्य करके नीचे गई और उससे कंचुकी मांग कर ली और महारानीजी को ले जाकर दे दी। ज्योंही महारानी ने देखी तो यह विश्वास हो गया कि वास्तव में यह देवी–प्रदत्त ही है क्योंकि ऐसी कला तो मानव के हाथ की तो हो ही नहीं सकती। उसी

समय खुश होकर अपने रत्नों के खजाने में से आँख बंद करके यह संकल्प कर डाला कि जो भी हाथ में आयेगा वो रत्न देवी के नाम पर इसको दे दूंगी। और इसी संकल्प के साथ जो भी हाथ में आया बिना देखे एक कपड़े में बांधकर दासी को दे दिया और बोलींयह देकर उसको बोलना कि यह देवी को भेंट चढ़ा देना। और जो–कुछ प्रसाद मिले वह लेके आना। दासी ने जाकर महारानी द्वारा कही बात बताकर उसको कपड़े की पोटली पकड़ा दी।

धन्ना उसको लेकर आया और जैसे के तैसे मोहिनी को पकड़ा दिया। अब तो मोहिनी की खुशी का पार नहीं रहा और ऐसी विचित्र–विचित्र चीजें बनाकर धन्ना के साथ भेज देती और धन्ना उनके बदले जो महारानीजी देती वो लाकर मोहिनी को दे देता। ऐसा करते–करते अब मन में विचार आया कि जिस प्रतिज्ञा की पूर्ति हेतु घर छोड़ा, पतिदेव का साथ छूटा उस प्रतिज्ञा को पूरा करने का समय आ गया। ऐसा सोचकर उसने मर्दाना भेष धारण किया और अन्दर की सारी व्यवस्था करके ताले लगाये और बाहर आई। संयोग से वह बग्घी वाला भी उधर से निकल गया। ज्योंही उस पर दृष्टि पड़ी तो रोका और धन्ना को सारी भोलावन देकर बग्घी पर चढ़ गये।

(17)

बग्घी वाला सेठजी को लेकर मध्य बाजार में आया, जहाँ से सेठ मोहनलाल ने राजा को भेंट करने योग्य कुछ बहुमूल्य वस्तुएँ खरीदी और बग्घी में रखकर कहाँअब मुझे राजभवन लेकर चलो। बग्घी वाले ने अपनी बग्घी राजभवन की ओर मोड़ ली। बग्घी राजभवन के पास रुकी। सेठ मोहनलाल बग्घी से उतरे और द्वारपाल को कुछ इनाम देकर अन्दर गये और राजसभा के पास जाकर वहाँ के द्वारपाल को उपहार भेंट कर कहा कि आप जाकर रत्नपुरी नरेश महिपाल को अर्ज करें कि कंचनपुरी के सेठ मोहनलालजी आप से मिलने की उत्कृष्ट अभिलाषा लेकर आये हैं। द्वारपाल ने भीतर जाकर रत्नपुरी नरेश के चरणों में निवेदन किया तो उन्होंने बड़ी प्रसन्नता से कहा कि उन्हें बड़े सम्मान के साथ भीतर ले आओ क्योंकि कंचनपुर में रत्नपुरी नरेश का ननिहाल था।

सेठ मोहनलालजी भीतर पहुँचे और रत्नपुरी नरेश महिपाल का अभिवादन कर अपने साथ लाये हुए उपहार भेंट करके कुशलक्षेम पूछी। रत्नपुरी नरेश महिपाल ने भी ननिहाल के राज्य आदि की कुशलक्षेम के साथ ही आगमन का कारण पूछा। तब श्री मोहनलाल सेठ ने बड़े

होश एवं जोश के साथ नम्रतापूर्वक निवेदन कियौंराजन ! एक विशेष स्वप्न–दर्शन की प्रेरणा के साथ दिव्य शक्ति के प्रभाव से कंचनपुरी से पैदल रवाना हुआ और रत्नपुरी के 5 किलोमीटर दूर आकर रुका और जो स्वप्न–दृश्य दिखाकर दिव्य शक्ति ने प्रेरणा दी कि वहीं पर तुझे एक छोटा लेकिन भव्यनगर तेरे माता–पिता के नाम से बनाकर उसमें सर्वजनोपयोगी साधन विद्यालय, औषधशाला, दानशाला, धर्मशाला, देवालय आदि का निर्माण कराकर इस धन का सदुपयोग करके लाभ उठा ले। इससे तेरे धन की सार्थकता हो जाएगी नहीं तो अब कुछ समय बाद ही सारी सम्पत्ति नष्ट होने वाली है। इसलिये चेत जा।

बस, उसी दिव्य शक्ति की प्रेरणा से अब आपकी शरण में आया हूँ क्योंकि वह जंगल का स्थान आपकी राज्य–सीमा के अन्तर्गत आता है। इसलिए आपकी आज्ञा लेना नितान्त आवश्यक है। इसलिए आपसे नम्र निवेदन है कि आप मुझे अपनी प्रजा का सदस्य ही समझें और वह नगर भी आपके राज्य के अन्तर्गत ही रहेगा और उसका सारा लाभ भी आपकी जनता को ही प्राप्त होगा। सिर्फ नगर व उसमें बनाये जाने वाले परमार्थ प्रतिष्ठानों पर मेरे माता–पिता का नाम रहेगा।

रत्नपुरी नरेश महिपाल स्वप्न–दर्शन व दिव्य शक्ति की प्रेरणा की बात सुनकर बहुत प्रसन्न हुए। और बोलेंयह स्वप्न–दर्शन और दिव्य शक्ति की प्रेरणा तो मेरे राज्य के लिए शुभ–सूचक है। साथ ही मेरी प्रजा के लिए भी हितकर है। तो फिर देर किसकी। मैं सहर्ष आज्ञा प्रदान करता हूँ कि आप जिस नाम से नगर निर्माण करना चाहें और जो परमार्थ संस्थान निर्मित करना चाहें करें। इतना ही नहीं, नगर निर्माण में सड़कें, बाग–बगीचे और अन्य सुविधाएँ व मजदूरों की व्यवस्था राज्य की ओर से ही होंगी और प्रजा के आवास–निवास की भूमि भी राज्य की ओर से उस नगर में आकर बसने वालों को मुफ्त में दी जायेगी। इसलिए आप जितनी लम्बाई–चौड़ाई में नगर की बसावट करना चाहें और जैसी दिव्य प्रेरणा व स्वप्न–दर्शन के आधार पर उसकी भव्यता बनाना चाहें, बनाएँ। मेरी तरफ से आज्ञा है और सहयोग भी है।

बस, फिर क्या था। राज्य–व्यवस्थानुसार दस्तावेज बनकर तैयार हो गया। नगरी का नाम धनलक्ष्मीनगर के नाम से और रत्नपुरी नरेश महिपाल के मय हस्ताक्षर सौंप दिया। जिसको लेकर सेठ मोहनलाल बड़े प्रमुदित भाव से अपने निवास स्थल पर पहुँचे। और शुभ मुहूर्त में नगरी की नीवँ भी रत्नपुरी नरेश महिपालजी के कर–कमलों से खुदवाकर कार्य प्रारम्भ कर दिया गया।

सबसे पहले उस शिलापट्ट पर बैठ कर महामंत्र के जाप सहित अखंड तेला किया। उस स्थान के आस–पास विशाल मैदान पर मजबूत परकोटा खिंचवा कर चारों तरफ चार द्वार निर्मित किये गये। उनके मध्य में एक भव्य महल के निर्माण के साथ ही उस झरने के पानी को संगृहीत करने हेतु विशाल सरोवर, उसके पास ही एक विशाल औषधशाला, फिर विद्यालय और उसके पास विशाल धर्मस्थान, वाचनालय और एक बड़ी दानशाला के निर्माण की योजना बनी।

साथ ही चारों द्वारों से जुड़ी बड़ी–बड़ी चार सड़कें, जिनके आस–पास विभिन्न व्यापारियों के व्यापारिक प्रतिष्ठान एवं उस पर ही अनेक आवास, जो एक–एक सड़क पर एक ही तरह के निर्मित किये जाएंगे। बीच–बीच में विस्तृत चौक और उनसे निकलने वाली सड़कें चारों सड़कों को मिला देंगी। साथ ही चौक के बीच में सर्कलनुमा चार द्वार वाले बगीचों का निर्माण किया जायेगा जहाँ पर धनलक्ष्मीनगर मार्ग 1, 2 आदि अंकित होंगे। उनमें उस मार्ग में बसे घरों की संख्या का भी निर्देश होगा। ऐसा नगर का प्रारूप बन गया।

कार्य तीव्रगति से चलने लगा। कोट के अन्दर के निर्माण के कार्य की देखभाल तो सेठ मोहनलाल धन्ना के सहयोग से करते और बाहरी निर्माण की देख–रेख हेतु

राज्य के प्रमुख व्यक्ति नियुक्त कर दिये गये। धन की तो जब भी कमी महसूस होती तो वे रत्न व आभूषण बेचकर पूर्ति कर देते।

(19)

अब धन्ना उसी जगह पर रात–दिन रहने लगा। सारे निर्माण के साधनों की और कार्य की देख–रेख के साथ मजदूरों पर भी पूरी निगरानी रखते हुए किसको रखना, किसको निकालना व किसको कितनी मजदूरी देना आदि का सारा हिसाब–किताब अपने दिमाग में ऐसा जमा लेता कि मानो उसके सामने आज के कम्प्यूटर भी फैल हो जाते। भले ही वह अनपढ़ था, लेकिन उसके कार्य–कलाप से सेठ मोहनलाल (मोहिनी) पूर्ण संतुष्ट था। वह दिन–भर मर्दाना भेष में रहकर सारा कार्य देखती और घर में जाकर रात्रि को स्त्री भेष पहनकर रहती और भोजन आदि का सारा कार्य स्वयं करती और अपनी प्रतिज्ञा की पूर्ति होते देखकर मन में प्रसन्नता का अनुभव करती।

पर पतिदेव गणेश के बिछुड़ जाने से उसकी यादों में अचानक सिहर उठती और कभी–कभी आँखों से आँसू बहा देती। फिर मन में धैर्य धारण करके चिन्तन करती कि जिसने प्रतिज्ञा की पूर्ति की इस स्टेज तक

पहुँचा दिया है तो आशा ही नहीं, पूरा विश्वास है कि एक दिन बिछुड़े पतिदेव का भी जरूर मिलन होगा। इस प्रकार मन को पुनः स्थिर करती और कुछ समय महामंत्र का स्मरण करती जिससे उसको बहुत बड़ा संबल मिलता।

विकट से विकट परिस्थिति में भी सामायिक, प्रतिक्रमण आदि धर्म– क्रियाएँ उसने कभी नहीं छोड़ी क्योंकि हृदय में यह दृढ़ आस्था जम गई कि सब–कुछ देव, गुरु व धर्म की ही शक्ति है और महामंत्र का यह अचिन्त्य प्रभाव है। यह सोचकर सब चिंताओं से मुक्त होकर स्वयं अपने हाथों से भोजन बनाती। खुद खाती और धन्ना के लिये भी टिफिन तैयार करके साथ लेकर चली जाती। और दिन–भर वहीं बने कार्यालय में सेठ मोहनलाल के रूप में बैठकर अन्दर–बाहर की निगरानी रखती।

यदि कोई वस्तु खरीदनी होती तो धन्ना को भेज देती या विशेष प्रसंग पर स्वयं भी चली जाती। बीच–बीच में राज्यप्रमुखों, मजदूरों एवं कारीगरों से उनके सुख–दुःख की बातें पूछ लेती। सारे कार्यों का जायजा लेकर आवश्यकतानुसार आदेश–निर्देश भी दे देती जिससे सब मजदूर और राज्य– कर्मचारी भी खुश रहते और पूरी तन्मयता से कार्य करते। बीच–बीच में उनका उल्लास बढ़ाने हेतु कुछ पारितोषिक और नाश्ता, फल आदि का भी वितरण कर देती जिससे सब लोग दिल लगा कर

तीव्रगति से कार्य करते थे।

सेठ मोहनलाल की उदारता, आत्मीयता, वचन माधुर्यता से छोटे से बड़े, सब व्यक्ति प्रभावित हुए बिना नहीं रहते। सब यही सोचते और बात करते रहते कि अहो ! इतना बड़ा सेठ, पर कितनी नम्रता और वचनों में इतनी माधुर्यता मानो अभिमान तो इनसे कोसों दूर भाग गया हो। कोई कहता धन्यवाद है इनको कि इस भीषण दुष्काल की चपेट में जनमानस कितना आकुल–व्याकुल हो रहा था। सबके मन में रात–दिन एक ही प्रश्न नोचता रहता था कि अब कैसे जीवनयापन होगा ? कैसे बाल–बच्चों का पालन करेंगे ? कैसे पशुओं की रक्षा होगी ? पर ऐसे मौक पर इन्होंने यह कार्य प्रारम्भ करके जो सहयोग दिया है, चाहे मजदूरी के रूप में ही क्यों न हो, पर आज आराम से जीवन–निर्वाह तो हो रहा है। नहीं तो हम घर–बार छोड़कर कहाँ–कहाँ घूमते–भटकते।

साथ ही उदारता, नम्रता भी कितनी, मानो हमारे लिए तो ये भगवान् बनकर ही यहाँ आए हैं। ऐसा सोचकर सब उनके प्रति अपने कृतज्ञ भाव का प्रदर्शन करते और पूर्ण तन्मयता से कार्य करने में जुटे रहते।

(20)

इधर गणेश व उनकी पत्नी मोहिनी अपनी जेठ–जेठानियों के व्यंग्य– बाण एवं दुर्व्यवहार से परेशान

होकर अर्धरात्रि पश्चात् बिना बताए ही घर का त्याग करके निकल गये थे। इसलिए रात्रि को तो किसी को कुछ पता नहीं चला। सब अपनी मद–मस्ती में बिना पैसे के मजदूर गणेश और मोहिनी के भरोसे निश्चिंतता से सोये हुए थे। न घर की साफ–सफाई की चिंता, न पानी भरने की, न खाना पकाने की चिंता और न पशुओं को संभालने, न खेती–बाड़ी की चिंता क्योंकि सारा कार्य ये दोनों संभाल लेते।

उनको तो नाश्ते के समय नाश्ता, भोजन के समय भोजन तैयार मिल जाता, तब सब उठते और शौचादि से निवृत्त होते। यहाँ तक कि हाथ भी धुलाते तब धोते और फिर जब नाश्ता करते तो भी उसमें पचास नुक्स निकालते कि इसको कुछ बनाना ही नहीं आता, किसी काम में साफ–सफाई नहीं है।

लेकिन आज तो सब ही सोये ही रह गये क्योंकि कौन आकर जगाये। क्योंकि जगाने वाले तो बहुत दूर चले गये थे। नींद तो तब खुली जब पीछे बाड़े में गायें व बछड़े आदि रम्भाने लगे। भैंसे और पाड़े–पाड़ी अड्डाने लगे। इधर उठ कर देखा तो न तो घर का कचरा निकला, न पानी भरा, न चूल्हा जला और न दूध–नाश्ता ही तैयार हुआ। तीनों जेठ, तीनों जेठानियाँ यह देखकर बड़बड़ाहट करती सासूजी के पास आई और जोर–जोर

से चिल्लाती हुई कहने लगीं"सासूजी राज ! यह देखिये आपके बेटे–बहू का हाल। कल तो इतनी लम्बी–चौड़ी बातें करने लगी थी और आज सूर्योदय को इतना समय हो गया, फिर भी सब काम यों का यों पड़ा है।

बिना कमाये मेहनत के सीधा जो घर में लाकर देते हैं आपके बड़े बेटे, फिर भी पकाने और घर के छोटे–बड़े काम करने में भी इतना जोर आता है। आप खुद ही देखिये। इस प्रकार जोर–जोर से बड़बड़ाहट करते हुए उनके सोने–बैठने के स्थान पर पहुँची, पूरे स्थान को टटोला। उनके कमरे को भी देखा तो ताला बन्द। तीनों हैरान होकर पीछे बाड़े में गई तो वहाँ भी सारा गोबर पड़ा हुआ था। गायें–भैंसे दूध निकालने और घास–बांटे व पानी का इंतजार कर रही थी। पर वे दोनों नहीं दिखे।

आखिर वो हड़बड़ाती हुई पुनः सासूजी के पास पहुँची। सासूजी क्या बात है, सब जगह ढूंढ कर आ गई लेकिन गणेशजी व उनकी पत्नी दोनों ही नहीं दिख रहे हैं। क्या आपको कुछ कह कर गये हैं ? यह बात सुनते ही सास लक्ष्मी हतप्रभ हो उठी और नयनों से नीर बहाती हुई बोलीं"क्या कहती हो ? क्या वो दोनों नहीं दिखे ? ओहो तब तो गजब हो गया। मेरा मन कहता हैं"हो–न–हो, कल के तुम्हारे वचनों के तीरों से मोहिनी बड़ी व्यथित

लग रही थी। शायद उसका मन भी उचटा–उचटा तो लग रहा था। हो–न–हो कहीं उन्होंने आत्महत्या तो नहीं करली है ? क्योंकि वचनों की मार ऐसी ही होती है। एक कहावत भी है कि 'तलवार के घाव तो फिर भी शीघ्र भर जाते हैं पर वचन के घाव नहीं भरते।

हाय ! अब मैं क्या करूंगी। मेरे बुढ़ापे में धूल पड़ गई। हाय ! वे दोनों कहाँ गये ? अब मैं क्या करूं ? मैंने कई बार अनुभव किया कि इस घर में तुमने कभी अपने छोटे देवर–देवरानी की तरह तो दूर एक नौकर–नौकरानी जितनी भी इज्जत नहीं रखी। हर समय तुम्हारे सिर पर तो धन का नशा चढ़ा रहता। वे दोनों इतना–सारा घर का काम करते। हम दोनों के साथ तुम्हारी सबकी कितनी सेवा करते, पर तुम तो उन पर वचनों के वार करते नहीं चूकती। अपने देवर–देवरानी की हैसियत से कभी उनकी तुमने इज्जत भी नहीं की। कभी यह नहीं सोचा कि न मालूम किसके भाग्य से हम सुख से जी रहे हैं, खा–पी रहे हैं। लेकिन किसको कहें ? कौन सुनने वाला ? आखिर वो भी इस घर के सदस्य थे और हिस्से के हकदार भी। धन ही सब–कुछ नहीं होता। उसका क्या अभिमान करना ? आज है कल चला भी जा सकता है। बड़े–बड़े राजा –महाराजाओं को भी देख रहे हैं।

वो तो इस घर के हकदार थे। तुम्हारे पति दुकान

पर बैठे बिना पसीना बहाये कमाते पर तुम तो महलों में बैठी–बैठी केवल उन पर रौब ही जमाती और हुक्म ही चलाती और मारती रहती ताने। फिर भी वे बिचारे चुपचाप तुम्हारी कितनी इज्जत करते और हमारी कितनी सेवा करते। गणेश खेतों में मजदूर की तरह और मोहिनी मजदूरनी की तरह तुम्हारी सेवा करती। उसके बदले तुम उनको क्या देती ? विषभरे वचन और मर्मभरे ताने। मुझे लगता है, कल तो तुमने हद ही कर दी। आखिर सहन करने की भी हद होती है। वे दोनों परेशानी के मारे यहाँ से निकल गये पर कहीं कुछ कर बैठे तो हम दुनिया में मुँह दिखाने लायक नहीं रहेंगे। क्या जवाब देंगे सगे–सम्बन्धियों, गाँव और समाज को। ऐसा कहते–कहते सास लक्ष्मीबाई जोर–जोर से रोने लगी।

ससुर धनपत को भी जब यह बात मालूम पड़ी तो वह बेचारा सारी बात सुनकर भारी गमगीन हो गया। और कहने लगाँचलो, गणेश की माँ अपन भी इस घर से निकल जाते हैं। इनको यहाँ आराम से रहने दो। लेकिन तीनों बहुएँ आड़ी फिर गई और अपने अपराध की क्षमा मांगते हुए कहने लगीँआपको हम कहीं नहीं जानें देंगी। साथ ही देवरजी व देवरानीजी की भी खोज करायेंगी। ऐसा मन में कोई विचार न लायें। हम आपकी पूरी सेवा करेंगी। ऐसा कहकर बड़ी मुश्किल से रोका दोनों को।

(21)

इधर धीरे–धीरे यह बात सारे मौहल्ले में फैल गई। जिसने भी सुना सब आश्चर्य करते हुए हवेली में कोई धनपत सेठ के पास तो कोई लक्ष्मी सेठानी के पास बैठकर एवं कुछ लोग बाहर ही बैठकर तरह–तरह की बातें करने लगे। कोई कहने लगाँभाई, गणेश चाहे दिखने में सीधा–सादा, कम पढ़ा–लिखा था और भले व्यापार करना नहीं आता, पर था पुण्यवान। हमने देखा, उसके जन्म के पहले सेठ धनपत के यहाँ रोटियों के लाले पड़ते थे। लेकिन उसके जन्म लेने के बाद ही यह घर ऊँचा आया है। यह हवेली, यह पेढ़ी सब उसके बाद ही बने हैं।

साथ ही उसकी पत्नी भी भले साधारण परिवार की हो, चाहे इन बड़ी बहुओं की तरह पीहर से धन न लाई हो, पर थी बड़ी सुशील, मेहनती और विनयवान और कैसी लज्जावान थी। सारे घर का काम अकेली संभालती। इतना ही नहीं, आस–पड़ौस वालों की सेवा भी करने हेतु तत्पर रहती। हालांकि इन बड़ी बहुओं का उसके साथ इतना नीच से नीच व्यवहार, जितना गये–गुजरे नौकर के साथ भी नहीं होता, वैसे करते देखकर हमें भी दया आ जाती। पर उसने किसी के सामने कभी कोई बात नहीं की। उल्टा कोई कह देते तो यही कहती, बड़ों की सेवा

कहाँ है पड़ी है ? जिनकी पुण्यवानी होती है उन्हीं को बड़ों की सेवा का सौभाग्य प्राप्त होता है। उसको कभी मुँह चढ़ाते, रोते नहीं देखा। हमेशा उसके चेहरे पर मुस्कान बिखरी रहती थी।

इधर ये बड़ी बहुएँ जो अपने–आप को बड़े बाप बेटी मान कर घमंड में ही फूली रहती हैं, आज इतना अरसा (समय) हो गया। इस घर और मौहल्ले में आए, पर कभी इनको बड़ों–बुड्ढों की इज्जत करते नहीं देखा, न किसी से प्रेम से बोलते, न सुख–दुःख में आत्मीयता दिखाते देखा। हो–न–हो इनकी परेशानी से ही वे दोनों घर से चले गये।

एक बहिन बोलने लगीं देखो, भई मुझे तो ऐसा लग रहा है कि उन पुण्यवान आत्माओं के घर से निकलने के बाद घर की पुण्यवानी भी निकल गई। लेकिन विचार तो इन सेठ–सेठानीजी का आता है। आखिर माँ–बाप के लिए ज्यादा कमाऊ, चाहे कम कमाऊ, सब समान हैं और इनकी तो सेवा करने वाले भी वही थे। ये तीनों बेटे और बहुएँ तो रात–दिन अपने अहंभाव में डूबे रहते थे। कभी इनके पास बैठकर सेवा करते भी नहीं देखा। अब उनके जाने से इनकी हालत खस्ता हो जाएगी। ऐसा सोचकर कई लोग सांत्वना देते हुए कहतेँआप उनकी चिन्ता मत कीजिए, वे आपको छोड़ कर नहीं जा सकते।

हो सकता है अधिक परेशान होने से मन उचट गया हो और दोनों यहाँ से रवाना हो कर कहीं ननिहाल या गणेश के ससुराल चले गये हों। इसलिये थोड़े दिन रह कर मन का आवेग ठंडा होने पर वापस आ जायेंगे। आप निश्चिंत रहें। हम भी चारों तरफ उनकी खोज करके समाचार लेंगे। ऐसा कहकर सब अपने–अपने घर में चले गये। लेकिन यह चर्चा तो धीरे–धीरे शहर में फैलने लग गई। क्या दुकान, क्या घर, क्या बाजार, जिससे तीनों बहुओं का हाल बेहाल था ही, इससे भी अधिक बेहाल भाइयों का था। जो भी आता यही चर्चा करता। इस कारण से दुकान पर बैठना भारी हो गया। वे सबको यही उत्तर देतेंक्या करें, औरतों की बातों में आ गया। खैर, सब तरफ खोज कर रहे हैं। देखें, क्या होता है। ऐसे सबको शांत करके रवाना करते।

(22)

इसी उधेड़बुन से घर का सारा काम बिखरा पड़ा था। पानी के बर्तन देखो तो खाली पड़े हैं। आटा भी पीसा हुआ नहीं है और न ही पशुओं को चारा–पानी। आखिर अब अन्य कुछ उपचार नहीं था। विवश होकर तीनों पानी लाने निकली। पानी कैसे लाया जाता है ? उसमें कितना जोर लगता है ? आज उनको मालूम पड़ा। साथ ही आज

तीनों बहुओं को पनघट पर देखकर सारी औरतें ताने मारने लगी और आपस में बातें करने लगीं देखो बेचारी गणेशजी की बहू को, सारे घर का कितना काम करती तो भी बिचारों को ताने मार–मार कर इतना दुःखित कर दिया कि बिचारों को घर छोड़कर निकलना पड़ा। अब मालूम पड़ेगा कैसे काम करना होता है ? इतने दिन देवरानी के भरोसे खूब मौज उड़ा ली।

बेचारी तीनों बहुओं को काटो तो खून नहीं। पर विवश थी। जैसे–तैसे पानी भरने के बाद फिर गायों–भैसों का गोबर साफ करना पड़ा। फिर गाय–भैंस का दूध निकाला तो आधा भी नहीं निकाल पाई। आटा भी पीसना पड़ा। और जैसे–तैसे भोजन बनाकर सबको भोजन कराया। पर हालत ऐसी खराब हो गई कि दो को तो बुखार ही आ गया। अब तो सारा काम बड़ी वाली के ऊपर आ गया। वह भी एक–दो दिन में ही पूरी तंग आ गई। अब तो तीनों ही यह सोचने लगी कि मैं कम से कम काम करूं। इसलिए सब काम से जी चुराने लगीं जिससे छोटी–छोटी बातें में परस्पर झगड़ा होने लग गया। आखिर सबने एक ही निश्चय किया कि सब अपनी–अपनी रसोई अलग बनाने लग जाएं, जिससे घर का खर्च भी तिगुणा हो गया।

इधर वृद्ध माता–पिता की हालत भी खराब हो

गई। तीनों अपने–अपने बाल–बच्चों की व्यवस्था करने में ही इतनी परेशान हो जाती कि सेठ–सेठानी की कौन चिन्ता करे। सब एक–दूसरे के भरोसे रह जाते कि उसने खाना भेज दिया होगा, उसने भेज दिया होगा। ऐसी परिस्थिति में जैसे–तैसे भूखे–प्यासे रहकर पाँच–सात दिन निकाले। आखिर सेठ–सेठानी दोनों ने भी अलग रसोई बनाना चालू किया जिससे लोगों में तरह–तरह की चर्चा होने लगी। पेढ़ी की जो प्रतिष्ठा थी वह भी धीरे–धीरे कम होने लगी। जिसका प्रभाव व्यापार पर भी पड़ा। जहाँ पहले ग्राहकों की भीड़ उमड़ती थी वहाँ अब उसके लाले पड़ने लग गए। बड़ी मुश्किल से एक–दो ग्राहक दिन–भर में आते तो उन्हीं से खर्च निकल सके, ऐसा कस निकालने लगे जिससे हुआ यह कि सारा व्यापार ठप्प पड़ गया।

इधर जिनकी पूंजी जमा थी वे भी आकर मांगने लगे जिससे पेढ़ी की इज्जत भी खतरे में पड़ गई। पेढ़ी की प्रतिष्ठा रखने हेतु उल्टा–सुल्टा कार्य करने लगे। एक दिन कुछ चोर चोरी का माल बेचने आए तो लोभ में आकर खरीद लिया। लेकिन वह माल राजघराने का था। इधर गुप्तचरों ने जाकर राजा को सारी बात बता दी। ज्योंही राजा ने गुप्तचरों से यह बात जानी, उन्होंने उसी समय राज्य–कर्मचारियों को भेजकर उनको महल में बुलाया और सारी पूछताछ करने लगे। लेकिन जब उन

तीनों भाइयों ने बिल्कुल इनकार कर दिया तब राजा ने कुपित होकर राज्य–कर्मचारियों को भेजकर सारी हवेली और दुकान की तलाशी लेकर जेवर प्राप्त किये। फिर हवेली को सील करके राज आज्ञा सुना दी कि कल सूर्यास्त के पहले–पहले इस राज्य की सीमा को छोड़ दें।

यह बात तुरन्त ही सारे मौहल्ले में फैल गई। सब लोग हवेली के आस–पास में एकत्रित हो गये। सारे परिवार में तहलका मच गया। सब किंकर्तव्यविमूढ़ हो गये। सोचने लगेंअब क्या करें ? कहाँ जायें ? निकट सम्बन्धियों ने राजा से सिफारिश की लेकिन कुछ जोर नहीं चला। आखिर रोते–बिलखते ज्यों–के–त्यों हवेली से बाहर निकलना पड़ा। जिसने भी सुना सब थू–थू करने लगे। सबके मुँह से एक ही आवाज निकल रही थीदेखो गणेश और उसकी पत्नी मोहिनी, भले पढ़े–लिखे और इतने होशियार न थे लेकिन थे नीतिवान, परिश्रमी और पुण्यवान। जब तक वे घर में थे, इस घर का कितना गौरव बढ़ा। चारों तरफ इस परिवार की कितनी यश–कीर्ति फैली।

आज प्रत्यक्ष देख लो। उनके जाते ही इस परिवार की कैसी दुर्दशा हो गई। सारी इज्जत पानी में मिल गई। कर्म की दशा कैसी विचित्र है। व्यक्ति सत्ता–सम्पत्ति के मद में बेभान होकर कर्म–बन्धन के

समय तो कुछ नहीं सोचता। हँस–हँस कर बांध लेता है, फिर वे कर्म जब उदय में आते हैं तब कितना बुरा फल देते हैं। क्षणमात्र में राजा से रंक बनने में देर नहीं लगती। देखो बेचारे धनपत सेठ व सेठानी लक्ष्मी को। इस वृद्धावस्था में आज जीते–जी घर'बार छोड़ना पड़ रहा है। अब कहाँ जायेंगे ? कहाँ रहेंगे ? कहाँ भटकेंगे ? इस प्रकार जितने मुँह उतनी बातें। कोई हमदर्दी दिखा रहा था तो कोई व्यंग्यात्मक कटु वचनों के तीर छोड़ रहा था।

कोई कहतौंदेखो, हाथों–हाथ इनको अपनी करनी का फल मिल गया। बेचारा गणेश और उसकी पत्नी मोहिनी रात–दिन इनकी कितनी सेवा करते और सबको शान्ति पहुँचाते। न कभी किसी से झगड़ा, न कभी किसी से वैर–विरोध। अपने काम में ही मस्त रहते। अरे घरवालों की ही क्या, सारे मौहल्ले वाले, पास–पड़ोसियों का भी कितना ध्यान रखते। छोटे–बड़े सबकी इज्ज्त करते। लेकिन ये धन के मद में पागल बनकर उनकी कुछ भी इज्जत नहीं करते। और तो और, उनका खाना–पीना भी पसन्द नहीं आता। कभी अच्छा खा लेते, पहन लेते तो इनको फूटी आँख नहीं सुहाता।

हर समय उन पर ताने कसते रहते। आखिर व्यक्ति सहन करके भी कितना करे ? रात–दिन, सोते, उठते, बैठते इनके वचनों के तीरों को सहन करते–करते

हैरान हो गये और विवश होकर रात्रि को ही घर छोड़कर जाना पड़ा। अब न मालूम दोनों कहाँ भटक रहे होंगे ? बेचारों की क्या दशा हो रही होगी ?

कोई बोलाँअरे भाई प्रत्यक्ष देख लो। उन सरलात्माओं को इस प्रकार तंग करके घर से निकाला तो आज इनकी भी कैसी दशा हो गई। सारे परिवार को आज कैसे छोड़कर निकलना पड़ रहा है। अब ये कहाँ भटकेंगे ? कहाँ इनको आसरा मिलेगा ? कुछ पता नहीं। नगरी का राजा पूर्ण रूप से कुपित हो गया है। अब यदि आस–पास के गाँवों, नगरों में भी खबर भेज दी तो क्या हाल होगा ? कौन नगरी में घुसने देगा ? कहाँ मजदूरी मिल पायेगी ?

कई भाई बोलतेंअरे भाई, इसीलिए ज्ञानीजनों का कथन है कि भोले–भद्रिक प्राणियों को कभी मत सताओ। उनके सरल हृदय में ही परमात्मा का निवास होता है।

(23)

इस प्रकार चारों तरफ लोगों की भीड़ एकत्रित होकर तरह–तरह की बातें कर रही थी, कौन किसको रोक सकता था। धनपत सेठ व परिवार वाले इन सब कटु आलोचनाओं को सुन चुप रहते। इसके अलावा अन्य कोई उपचार भी तो नहीं था। हाँ, इतना जरूर था कि लोगों

की इन सत्य तथ्य मूल बातों को श्रवण करके आत्मग्लानि तो जरूर हो रही थी कि वास्तव में हमारे कुकर्मों ने ही हमको आज इस दशा पर पहुँचाया है।

वास्तव में हमने पुण्यशाली भाई गणेश व उसकी पत्नी मोहिनी के साथ अत्याचार करने व कष्ट देने में कुछ भी कमी नहीं रखी। वे तो विचारे दिल खोल कर तन–मन से सेवा करते। साथ ही हमारा कितना आदर करते और सारे परिवार की कितनी सार संभाल करते। फिर भी हमने उनका तिरस्कार ही किया। उसीका यह फल हमको कुछ ही समय में मिल गया।

लेकिन अब क्या हो सकता है ? जो गलती हो गई वह तो हो गई। इस प्रकार पश्चात्ताप करते हुए अपने कुकृत्यों का हार्दिक पश्चात्ताप करने लगे और आँसू बहाने लगे। जिसे देखकर आस–पड़ौसियों के भी अश्रु प्रवाहित होने लग गये। उन्होंने पुनः राजा के चरणों में फरियाद करने का चिन्तन भी किया लेकिन राजा धर्मपाल की अनैतिकता पर कठोर दंडनीति का चिन्तन करके मन थर्रा उठा। क्योंकि वे ऐसे व्यक्तियों की सिफारिश करने वालों को भी कठोर दण्ड देते हैं। यह सोचकर चुप रहने में ही अपनी खैरियत समझने लगे। हाँ, इस घटना से बहुत–से व्यक्ति अपने–आप से सावधान जरूर हो गये। यह सोचकर कि कहीं थोड़ी–सी असावधानी हो गई

व्यापारिक लेन–देन में, तो हमारी भी यही दशा न हो जाय। साथ में देखा कि कुछ गुप्तचर इस बात की खोज में भी लगे हुए थे कि इस अनैतिक कार्य में कौन किस प्रकार सहयोग दे रहे हैं। ऐसा सोचकर सब ऊपरी सहानुभूति दिखाते हुए अपने–अपने घरों की ओर जाने लगे।

जब श्रेष्ठी धनपत ने देखा कि निकट से निकट सम्बन्धी भी अपना–अपना मुँह लेकर जा रहे हैं तो अब हमारा यहाँ कौन सहायक हो सकता है। तब सबको एक तरफ लेकर समझायाँदेखो, मैंने तुम सबको समय–समय पर खूब सावधानी दिलाई कि तुम अपने छोटे भाई से प्रेम रखोंवह भले पढ़ा–लिखा कम है, पर है पुण्यवान। साथ में उसकी पत्नी भी भले साधारण परिवार की है, पर है सेवाभाविनी, पुण्यशालिनी, सरल स्वभाविनी। क्या तुमने लोगों के मुँह से नहीं सुना ? और बचपन में खुद ने नहीं देखा, हमारी क्या हालत थी ? कैसे मेहनत–मजदूरी करके तुम्हारा पोषण करता था। जब से इसका जन्म हुआ तब से हमारा सुख–वैभव बढ़ता ही गया और बहू मोहिनी के घर आने के बाद तो हमारे घर की प्रतिष्ठा में चार चांद ही लग गये। पर तुम सबने उनकी उपेक्षा ही की। आखिर तो वो भी इंसान थे। इस उपेक्षित वातावरण से उनका मन उचट गया और वे घर छोड़कर चले गये। अब

तुम सब खुद ही अनुभव कर लो कि उसके बाद हमारे ऊपर कैसे–कैसे विपत्तियों के पहाड़ आ पड़े हैं। सारा धन–वैभव आज यहीं पड़ा है और हमको जीते–जी छोड़कर जाना पड़ रहा है। साथ ही, अब हम यहाँ पर किसी को मुँह दिखाने जैसे भी नहीं रहे।

इसलिए अब श्रेष्ठ यही है कि यहाँ से चुपचाप निकल जायें। क्योंकि कुछ भी आनाकानी करने पर राजा धर्मराज कुपित होकर सजा भी करा सकता है। इसलिये अब जो–कुछ हुआ, सो हो गया। अब सच्चे मन से पश्चात्ताप करते हुए इस संकल्प के साथ प्रभु से प्रार्थना करो कि वे दोनों एक बार हमको सकुशल मिल जावें तो अब हम कभी भी उनकी उपेक्षा नहीं करेंगे।

इस प्रकार पिता धनपत की बातों को सुनकर तीनों ही पुत्र व उनकी पत्नियें बिलख–बिलख कर रो पड़े और चरणों में गिरकर हार्दिक पश्चात्ताप करते हुए कहने लगेंपिताश्री ! आपकी बात बिल्कुल सत्य है। वास्तव में हमने अपने अहंभाव में उनकी कुछ भी महत्वता नहीं समझी। वे हमारी इतनी सेवा करते, सारे घर का काम–काज संभालते और हम उनके पीछे बिल्कुल निश्चिंत रहते। पर हम उनको निरे मूर्ख समझकर उनकी उपेक्षा करते रहे, जिसका फल हमारे सामने आ गया।

अब हम आपको पूर्ण विश्वास दिलाते हुए यह प्रतिज्ञा करते हैं कि हम अब उनकी खोज करके ही रहेंगे

और फिर कभी उनकी उपेक्षा नहीं करेंगे। बस, अब आप हमें क्षमा कर दें और यह आशीर्वाद दें कि वे हमको जल्दी से जल्दी मिलें। ऐसा कहकर पुनः पिताश्री के चरणों में गिर कर क्षमायाचना करते हुए भारी पश्चात्ताप के साथ अश्रु प्रवाहित करने लगे।

(24)

पिता धनपत इस प्रकार अपने पुत्रों एवं बहुओं के नयनों से पश्चात्ताप के अश्रु प्रवाहित होते देखकर उनको दिलासा देते हुए कहने लगे—वास्तव में अहंभाव व्यक्ति को ऐसे ही उन्मत्त बनाकर बेभान कर देता है जिससे व्यक्ति अपने आगे किसी को कुछ नहीं समझता है और उनके साथ दुर्व्यवहार करने हेतु भी तत्पर हो जाता है। यदि थोड़ा–सा भी उसके विपरीत कर दे अथवा उसकी हाँ में हाँ न मिलावे तो उसको अपना दुश्मन मान कर उससे नीच से नीच व्यवहार करने पर भी उतारू हो जाता है। पर उसे होश तो तब आता है कि उसका कटु फल उदय में आता है। उस समय भी अज्ञानी और अधिक रोष में आकर नये कर्म का बन्धन कर लेता है पर ज्ञानी व्यक्ति उस गलत प्रवृत्ति का पश्चात्ताप करके क्षमायाचना करके दोष की शुद्धि करते हुए आगे से ऐसी प्रवृत्ति से बचने हेतु सजग बन जाता है।

बड़ी प्रसन्नता की बात है कि तुमको इस विपत्ति ने सजग कर दिया जिससे तुम अपनी गलती का एहसास करके पश्चात्ताप के अश्रु बहा रहे हो। बस, अब जो–कुछ हुआ उसको भूलकर दृढ़ संकल्प के साथ में अब आगे बढ़ जाना ठीक है। अभी छाया लग्न भी श्रेष्ठ है क्योंकि आज गुरुवार है और मेरी छाया 7 पांव की इस समय पड़ रही है। यह लग्न सब दोषों से रहित होता है। क्योंकि बताया गया है कि शनि, शुक्र, सोम साढ़े आठ पांव, बुध आठ, गुरु सात, शनि ग्यारह पांव छाया सीधे रहकर अपने पावों से गिनकर देखें और शुभ कार्य के लिये प्रस्थान कर लें तो कोई ग्रह, नक्षत्र, तिथि बाधक नहीं बन सकते और हर शुभ कार्य लाभप्रद बनता है।

इसलिये अब देर करना उचित नहीं। सब महामंत्र का स्मरण करो और चल पड़ो। इस प्रकार पिताश्री की आज्ञा होते ही सबने तैयारी की और माता–पिता, बाल–बच्चों सहित सब की ममता मार कर निकल पड़े। अपनी हवेली, दुकान, नगरी आदि जीते–जी त्याग कर जाना उनके लिए भारी पड़ रहा था। सबकी आँखों में अश्रु प्रवाहित होने लगे पर कौन सांत्वना देने आगे आवे। सारा संसार ही स्वार्थ से भरा है। स्वार्थ की पूर्ति तक तो सब साथ देने हेतु तत्पर हो सकते हैं पर विपत्ति में कौन सहयोग दे। बिचारे सब टुकर–टुकर अपनी हवेली, दुकान को

देखते–देखते आगे बढ़े और नगरी बाहर निकले और चल पड़े दक्षिण दिशा में, जो राह मिली उस पर।

सिर्फ राज आज्ञा से सोने, बिछाने व पहनने के साधन, भोजन आदि बनाने के साधन और एक बैलगाड़ी और कुछ आटा, दाल आदि लेकर आगे बढ़ने लगे। और चलते–चलते उसी गाँव में आये जहाँ पर गणेश व मोहिनी ने विश्राम किया था। उसी बुढ़िया के चबूतरे के पास गाड़ी रोकी और चबूतरे पर सामान रखकर उस दिन तो जो थोड़ा–बहुत बना हुआ भोजन लेकर आए थे उसको खाया और फिर सब परस्पर आगे की योजना बनाने लगे और बातचीत में कहने लगे कि अब गणेश और बहू मोहिनी की कैसे खबर लगे। वे किस दिशा में घर से निकल कर गये उसी दिशा में हम भी बढ़ें ताकि कहीं–न–कहीं वे मिल जावें।

ये बातें अन्दर बैठी बुढ़िया ने सुनी और बाहर आकर देखने लगी। जब परिचय जाना तो मालूम पड़ा कि यह उन्हीं का परिवार है और अभी–अभी राजा ने जिनका सब–कुछ जब्त करके अपनी नगरी से निकाला, वे यही हैं। ऐसा सोचकर वह बोलीं"देखिये, राज–आज्ञा के विरुद्ध विशेष तो मैं कुछ नहीं कर सकती। पर इतना जरूर बता देती हूँ कि गणेश और उसकी पत्नी मोहिनी इधर ही आए थे और यहाँ दो–तीन रात मैंने उनको रखा भी था। और

तो और, जिन्दगी–भर उनको मेरे यहाँ रखने का सोचा भी था क्योंकि मेरे यहाँ पास में सेवा करने वाला कोई नहीं है। पुत्र व परिवार दिशावर रहते हैं। पर वो रुके नहीं थे। रात को बातचीत करते लोगों ने उनको रास्ता भी बताया था कि इस रास्ते से जाने पर आगे रत्नपुरी नगरी आती है। यह सुनकर उन्होंने उसी राह पर कदम बढ़ाये थे।

सेठ धनपत आदि ने जब यह बात सुनी तो सोचने लगेंशगुन तो श्रेष्ठ हुए हैं। कम से कम एक अंदाज तो लग गया। इसलिये अब उसी दिशा में बढ़ना हितकर है। इसलिए अन्य सब बातें गौण करके बोलेंमांजी आपका भला हो कि हमारे पुत्र व पुत्रवधू के बारे में आपने जानकारी दी। अब हम उनकी खोज में घर–बार सब छोड़कर निकले हैं। ऐसा कहकर उस समय तो सब सो गये। प्रातः उठकर जाने की तैयारी करने लगे। तब बुढ़िया ने कुछ भोजन सामग्री पकड़ा दी और बोलींमेरी शुभकामना है कि वे दोनों आपको शीघ्र मिल जावें। मेरी तरफ से भी उनको बहुत–बहुत याद करना क्योंकि उन्होंने दो–तीन दिन में मेरी ऐसी सेवा की कि आज भी हर समय याद आती रहती है।

बुढ़िया की यह आत्मीयता व गणेश और बहू मोहिनी की प्रशंसा सुनकर सब गद्‌गद हो गये और गाड़ी में सब सामान रखकर बुढ़िया को बोलेंमांजी आपकी कृपा

और आशीर्वाद से वे दोनों जल्दी मिलें, इसी आशा के साथ अब हम चलते हैं। हमारे कारण कोई तकलीफ हुई हो तो क्षमा करें। ऐसा कहकर आगे बढ़ गये।

(25)

कुछ दूर जाने के बाद सेठ धनपत बोलौंदेखो, यदि दुःख के दिन भी सुखमय बनाना हो तो हमको पूर्व के भोगे हुए सुखोपभोग के साधनों को ऐसे भूल जाना है जैसे हमारे पास थे ही नहीं। मानों उस जीवन से मरकर हमने नया जीवन प्राप्त किया है। फिर इस जीवन को कैसे सुख से जी सकें, इसका चिन्तन करते हुए जिस भी तरह से, जो भी कार्य करना पड़े सबको उसके लिए तत्पर रहना होगा। इसलिये मेरा सबको एक ही कहना है कि रास्त में लकड़ी, कंडे अथवा अन्य लौह–लक्कड़, घास जो भी मिले उसको गाड़ी में भरते चलो। ताकि हमारे रसोई में और बैलों के जो काम आएगा, आ जायेगा बाकी मौका देखकर बेच देंगे जिससे कुछ पैसा प्राप्त हो जायेगा। सबको सेठ धनपत की बात अच्छी लगी और उतर गये गाड़ी से। और इकट्ठे करने लगे रास्ते में मिलने वाली सामग्री को। तो गाँव में जाते–जाते सहज गाड़ा भर गया।

गाँव में पहुँचते ही एक वृक्ष की छाया में गाड़े को

रोका और बैलों को चारा डालकर गाड़े में ही बैलों को डोरी से बांध दिया। तीनों बहुएँ पानी लाकर भोजन बनाने बैठी। तीनों लड़कों ने गाड़े में भरी सामग्री के अलग–अलग ढेर लगा दिये। सेठ धनपत बाजार में गए और एक कबाड़ी से बात करके वहाँ लाए और सारा सामान बताकर मोल तयकर बेच दिया। जो–कुछ पैसा आया, उसको सुरक्षित रख कर भोजन आदि से निवृत्त हुए और कुछ देर विश्राम करके आगे बढ़ने हेतु रास्ते की जानकारी करके आगे बढ़ गये।

आगे–आगे जो भी गाँव आते, ठहरते कहीं नहीं। रास्ते में जो–कुछ मजदूरी मिलती, वे करते। सबको कभी पूरा भोजन मिलता तो कभी भूखा ही रहना पड़ता, फिर भी कोई उपचार नहीं था। जहाँ भी ठहरते, वहीं भाई गणेश और बहू मोहिनी की खोज करते और जो–कुछ जानकारी मिलती उसके अनुसार आगे बढ़ते जाते। इस प्रकार मेहनत–मजदूरी करते–करते रास्ते के भयंकर कष्टों को सहन करते–करते आखिर रत्नपुरी पहुँच गये। वहाँ करने लगे खोज दोनों की। परन्तु वहाँ कौन उनको पहचानते ? जिससे किसी से कुछ भी पता नहीं चला। आखिर उन्होंने एक व्यक्ति से पूछाभाई साहब ! बड़ी दूर से आये हैं, यदि कोई मजदूरी मिल सकती हो तो बताओ ताकि परिवार का गुजारा चल सके।

तब उन्होंने बतायाँभाई साहब, यहाँ से छः किलोमीटर दूर एक नया नगर बस रहा है। यदि वहाँ पर चले जाओ तो आपको अच्छी मजदूरी मिल सकती है। उस नगर का निर्माण करने वाले सेठ मोहनलाल बड़े उदार हैं। उनके मुँह से यह बात सुनते ही जल्दी से अपना सारा सामान गाड़े में रखा और रास्ते की जानकारी करके वहाँ पहुँच गये। लेकिन वहाँ से तो समय होते ही मजदूर और देख–रेख करने वाले सब अपने–अपने गाँवों में चले गये थे। जो सुदूर बाहर के मजदूर थे वे वहीं बनी घास–फूस की झौंपड़ियों में अपने–अपने परिवार के साथ भोजन बनाने में जुटे हुए थे।

नये व्यक्तियों को देख कर धन्ना उनके पास में आया और उनका परिचय पूछा। तब सेठ धनपत ने अपना कुछ परिचय बताकर मजदूरी की बात कही। धन्ना ने सारी बात सुनी और कहाँदेखिये अभी तो आप यहाँ विश्राम कीजिये। फिर कल सबेरे सेठजी के आते ही इसके बारे में विचार–विमर्श करके सारी बात बता दूंगा। बस, आप विश्वास रखिये। सेठजी बड़े उदार हैं। आपको अच्छी से अच्छी मजदूरी अपनी–अपनी योग्यतानुसार दिलाने की पूरी कोशिश करूंगा।

धन्ना के इस मधुर व्यवहार से सबको बड़ी शांति मिली। सब वहीं वृक्ष की छाया में गाड़ा खड़ा करके

सामान व्यवस्थित करके बैठ गये और जो–कुछ साथ में था वह खा–पी कर सो गये। और प्रातः महामंत्र का स्मरण करके, शौचादि से निवृत्त होकर इतंजार करने लगे सेठजी के आगमन का।

(26)

इतने में देखते ही देखते एक बग्घी अन्दर के परकोटे के बाहर खड़ी हुई और ज्योंही उसमें से सेठ मोहनलाल उतरे तो सब मजदूरों, कर्मचारियों के साथ धन्ना ने भी अभिवादन किया और सेठ धनपत और उनके परिवार से बोलौंये पधार गये हमारे सेठजी। यह सुनते ही उन्होंने भी हाथ जोड़कर उनका अभिवादन किया। तब सबका अभिवादन स्वीकार करते हुए उनकी दृष्टि सेठ धनपत व उसके परिवार पर पड़ी तो पहचानते देरी नहीं लगी और आश्चर्य भी हुआ कि ये यहाँ इस दशा में कैसे पहुँच गये ? फिर भी ऊपर से अपरिचित बनकर एक दृष्टि डालकर सबका परिचय पूछा। सेठ धनपत अपनी दीन–हीन दशा बताकर गिड़गिड़ाते हुए बोलौंबस, अब हम बड़ी आशा लगाकर आपकी शरण में आये हैं। कुछ मजदूरी मिल जाये तो सबके पेटपूर्ति का साधन मिल सके। सेठ धनपत की इस दशा को देखकर मन एकदम दयार्द्र हो गया और आँखों के माध्यम से बाहर प्रवाहित होने वाला

ही था कि उसने अपने मन को नियंत्रित करके रोक दिया और रहस्य को गुप्त रखकर धन्ना को साथ लेकर अंदर चले गये।

फिर धन्ना को बोले, देख धन्ना, बेचारे बहुत दयनीय परिस्थिति में इतनी दूर से यहाँ आये हैं तो कुछ शहर के मजदूरों को कम करके इनको रखना उचित लगता है। क्योंकि ये रात–दिन यहीं रहकर काम संभाल सकते हैं। इन तीनों को सबके ऊपर देख–रेख के साथ हिसाब संभालने के लिये नियुक्त कर दो। जो तीनों जवान औरतें हैं उनको ईंट पत्थर ढोने हेतु लगा दो। और जो बड़े–बूढ़े हैं उनको व बच्चों को कह दो कि आपसे जितना हो सके इनका सहयोग करो और बाल–बच्चों की देखभाल करो। साथ में रहने के लिये जो बड़ा टीन सेड का मकान, जिसमें अलग–अलग सोने की व्यवस्था है, वह उनको बता दो ताकि वहाँ सब कार्य निपट सकें। साथ ही भण्डार में से व्यक्तिशः राशन की फ्री व्यवस्था व सोने–बैठने के साधन और पहनने हेतु वस्त्र के साथ आवश्यकतानुसार बर्तन आदि की व्यवस्था कर दो ताकि इनको किसी प्रकार का कष्ट न हो।

साथ ही पुरुषों को दिन के बीस और स्त्रियों को दिन के दस रुपये के हिसाब से आठों व्यक्तियों की मजदूरी तय कर दो। सेठ मोहनलाल की बात सुनकर

धन्ना उनके पास पहुँचा और सारी बात समझा दी और मकान बताकर भण्डार से सारी आवश्यक वस्तुएँ दे दी। जिससे सब हर्षविभोर हो गए और सब धन्ना के निर्देशानुसार अपने–अपने कार्य में लग गये।

दिन–भर कार्य करने के बाद शाम को पाँच बजते ही सबको कार्य से छुट्टी दे दी गई। सब बाहर से आने वाले तो अपने–अपने घरों की दिशा में रवाना हो गये। लेकिन वहीं स्थायी रहने वाले अपने–अपने झोपड़ों में चले गये। सेठ धनपत व उनकी पत्नी लक्ष्मी ने दिन–भर घर की देखरेख के साथ भोजन आदि तैयार करके बाल–बच्चों को खिला दिया और तीन पुत्र व बहुओं के घर पर आते ही बड़े प्रेम से भोजन परोसा। आज तीनों भाइयों और तीनों देवरानी–जेठानियों ने बड़े स्नेहपूर्वक साथ–साथ बैठकर भोजन किया, कड़ी मेहनत और तीव्र भूख होने से भोजन का स्वाद ही कुछ अनूठा लगने लगा। सबको आज बड़ी शांति का अनुभव होने लगा। भोजन–निवृत्ति के साथ ही कुछ देर परस्पर सब बातचीत करने बैठ गये।

इधर धन्ना भी भोजन आदि से निवृत्त हुआ उन्हीं के पास आकर बैठ गया। आज उसको भी कुछ शांति का अनुभव हुआ क्योंकि इतने दिन वहाँ वह अकेला ही रहता था। छुट्टी होते ही बाहर के मजदूर आदि तो सब चले

जाते और यहाँ रहने वाले कुछ दूर अपने झोपड़ों में चले जाते। धन्ना वहाँ आया और पूछने लगाँबोलिये, और तो आपको कुछ तकलीफ नहीं है ? सब बराबर व्यवस्थित जम गया ? यदि और कोई तकलीफ हो तो किसी बात का बिना संकोच किये बता देना।

धन्ना की इस बात को सुनकर तो सब गद्‌गद हो गये और कहने लगेंभाई साहब, आज आपकी कृपा से ही कभी सोच भी नहीं सकते उतना सुख व आराम मिल रहा है। नहीं तो आज हम कितने दिनों से भाग्य रूठने से दर–दर की ठोकर खा रहे हैं। क्या बतायें, भाग्य जब रूठ जाता है तो राजा को रंक बनते देरी नहीं लगती। आज वही दशा हमारी हो रही है। भाग्य की अनुकूलता में व्यक्ति अपने अहं में किसी को कुछ नहीं गिनता। लेकिन यह नहीं सोचता कि न मालूम हम किसके भाग्य से सुखी हैं पर मालूम तो तब पड़ता है कि भाग्य ही क्या, भाग्यवान का साथ छूटने से ही जीवन की दशा क्या हो जाती है।

भाई हमारा भी यही हाल है। विशाल हवेली, लम्बा–चौड़ा व्यापार। चार–चार बेटे और उनकी बहुएँ सब–कुछ आनन्द ही आनन्द था। पर सबसे छोटा पुत्र व बहू बड़े सीधे–सादे, पूरे घर की सार संभाल व सेवा करते लेकिन उनकी सबने उपेक्षा ही की और वह भी अति।

इससे दुःखित होकर वे बिना बताये ही घर से निकल गये। वे क्या गये, हमारा भाग्य ही चला गया और आज हाट–हवेली सब कुछ छोड़कर दर–दर की ठोकरें खाते हुए उनकी खोज करते–करते यहाँ आकर कुछ शांति का अनुभव कर रहे हैं। दुःख तो इसी बात का है कि इतने गाँवों में खोज करते–करते हैरान हो गये। किसी ने बताया कि एक दम्पती इस रास्ते रत्नपुरी की ओर गये तो थे। बस, इसी विश्वास के साथ हम यहाँ पर आये और खोज की और कर रहे हैं कि हमारे भाग्य से वे हमको मिल जावें। यह कहते–कहते सबकी आँखों से आँसू बरसने लग गये।

धन्ना ने सारी बात सुनकर कहाँआप आँसू मत बहाइये। धैर्य धारण कीजिये। यह धरती ही ऐसी है कि यहाँ आने से दुःखी से दुःखी व्यक्ति भी सुख की प्राप्ति करता है। मैं भी अनाथ, लोगों की गायें चराकर जीवनयापन कर रहा था। संयोग से इस स्थान पर आया और सेठजी की छाया मिली और कुछ जीवन में शांति का अनुभव हुआ। मुझे अंतर विश्वास हो रहा है कि इस पवित्र भूमि में इन पुण्यवान सेठजी की छत्र–छाया में आपके भी संकट दूर होंगे। इस प्रकार सांत्वना देकर अपने कमरे में चला गया। उसके बाद वे भी दिन–भर के थके हुए होने से अपने–अपने स्थान पर जाकर निद्राधीन हो गये। और

प्रातः उठकर अपने दैनिक कार्य से निवृत्त होकर अपनी–अपनी ड्यूटी पर तैनात हो जाते। इसी क्रम में ज्यों–ज्यों दिन निकल रहे थे त्यों–त्यों कार्य भी तीव्र गति से आगे बढ़ रहा था।

धन्ना उनके सुख दुःख की बात जो भी सुनता, सारी बात सेठ मोहनलाल (मोहिनी) को निवेदन कर देता जिसको सुनकर उसका मन भी द्रवित हो जाता। यह जानकर कि वास्तव में हमारे आने के बाद पूर्ण रूप से दुःखित बन गये अर्थात् हमारे साथ किये गए दुर्व्यवहार का इनको फल मिल गया है और उसके लिए इनके मन में हार्दिक पश्चात्ताप भी है। यह जानकर मोहिनी कहतीं धन्ना बिचारे बहुत दुःखी हैं, इन्होंने कभी कष्ट नहीं देखा है। इसलिये इनका ध्यान रखना और कभी–कभी इधर–उधर आते–जाते हाथों के इशारों से ही उनकी सार–संभाल ले लेती और मन में यह सोचकर प्रसन्नता की अनुभूति करती कि चलो, एक बार सारा परिवार तो मिल गया। अब कमी रही है तो पतिदेव की ही, वह भी अवश्य पूरी होगी। ऐसा विश्वास मन में रखकर शहर में चली गई।

(27)

इधर वह गणेश उस दिन के तूफान में दिशा भ्रमित हो जाने से राह भटक गया और मोहिनी का साथ

भी बिछुड़ गया। इसलिये उसको ढूंढ़ने हेतु जंगल का कोना–कोना छान लिया पर पत्नी मोहिनी नहीं मिली। भूख, प्यास से एवं जंगली जानवरों के भय से उसका मन भय–भ्रान्त बन जाने से उसके वस्त्र भी झाड़ियों में उलझ–उलझ कर चिथड़े–चिथड़े हो गये थे। उसको बार–बार मोहिनी की चिन्ता सताने लगी। पत्नी विरह के दुःख से व्यथित बना कभी–कभी तो वह पागलों की तरह रोने–चिल्लाने लग जाता। हाय मोहिनी ! तू मुझे छोड़कर कहाँ चली गई। अब मैं तुझे कहाँ खोजूं। कहाँ तेरा पता लगाऊँ ? इस प्रकार रोते–बिलखते कुछ माह बाद वह उसी रत्नपुरी में पहुँच गया और उस नगरी की गली–गली में घूम–घूम कर आवाज लगाता है। मोहिनी तू कहाँ है ? मुझे छोड़कर तू कहाँ गुम हो गई ? तू जल्दी आ जा। तेरे बिना मेरा जीवन ही उजड़ गया है। अब मैं कैसे जीवन व्यतीत करूं ?

गणेश की इस प्रकार की बातों को सुनकर कई लोग उसको सांत्वना देते और कहतेंलो भाई, पहले थोड़ा भोजन कर लो, फिर हम भी तुम्हारे साथ मिलकर खोजने की कोशिश करेंगे। तो कोई उसको पागल समझकर, चिढ़ाते, गालियां देते। जिससे व्यथित होकर गणेश पाँच–दस दिन बाद वहाँ से रवाना होकर चलते–चलते उसी जगह जंगल में पहुँच गया जहाँ नगर–निर्माण का कार्य चल

रहा था। जिसको देखकर कुछ मजदूरों ने उसको शहर में देखा था, वे चिल्ला उठे। अरे देखो, यह पागल बिचारा आ गया जिससे अन्य लोग भी उसको देखने लग गये। तब सेठ धनपत भी इधर–उधर घूमते–घूमते वहाँ पहुँच गये और ज्योंही उनकी दृष्टि उस पर पड़ी और जोर से बोलेंअरे यह तो गणेश है। फिर तो भाई–भाभियां सब आ गये। गणेश ने भी सबको पहचान लिया और जोर–जोर से रोने लगा। तब सब उसको लेकर अपने स्थान पर आये और पूर्ण स्नेह और प्यार से सहलाते हुए शान्त किया और सब उससे अपने अपराधों की क्षमायाचना करने लगे। और पूछने लगे, भैया क्या बात हो गई ? तुम अकेले कहाँ से आ रहे हो ? कहाँ गई हमारी बहूरानी मोहिनी ? यह सुनते ही तो गणेश और जोर–जोर से रोने लग गया। पिता धनपत ने उसे गले लगाया। कहोंबेटा ! क्या बात है ? जो बात हो बता दे। अब अपन सब मिल गये हैं। तब उसने अपनी बीती सारी बात बताई और कहोंतब से मैं उसको ढूंढ़ते गाँव–गाँव नगर–नगर में भटके खा रहा हूँ। पर उसका कहीं अता पता नहीं लगा। यह तो ठीक हुआ कि आज आप सब मिल गये। तब सेठ धनपत बोलोंबेटा, अब तू चिन्ता छोड़ दे और यहीं रहकर कुछ दिन आराम कर। जितने में यहाँ का कार्य भी निपट जायेगा। तब अपन सब मिलकर खोज करेंगे। मेरा मन

तो यही कहता है कि जैसे तुम्हारे जाने के बाद राजा के यहाँ से हुई चोरी का माल तुम्हारे भाइयों के खरीद लेने से पकड़ में आ गये। जिस कारण से उन्होंने कुपित होकर हमारी हवेली, दुकान सब सील करके हमको जैसे के तैसे नगरी से निकलने का आदेश दे दिया। उसके बाद हम सब भयंकर कष्ट उठाते हुए भटकते–भटकते तुम्हारी खोज करते–करते यहाँ पर आये। तब से यहाँ पर भोजन और रहने को मकान, मजदूरी मिलने से कुछ शांति मिल रही थी। सिर्फ तुम दोनों की रात–दिन चिंता सताती रहती थी। उसमें से आधी चिंता तो दूर हुई आज तुम्हारे मिलने से। अब यहाँ पर वचनबद्ध होकर काम पर लगे तो हमारा कर्तव्य हो जाता है कि वह काम पूरा करके ही छोड़ें। नहीं तो उनके साथ धोखा होगा। यहाँ के सेठजी बहुत सज्जन हैं। उन्होंने हमारी सारी दुःखभरी बातें सुनते ही हमको यहीं अच्छी से अच्छी जगह पर काम पर लगा दिया। इसलिये अब यह कुछ ही दिनों में काम पूरा होने वाला है। इसके बाद अपन सब मिलकर मोहिनी की खोज करेंगे। मुझे तो यह भी पूरी आशा है कि इस पुण्यभूमि पर जैसे हमारा मिलन हुआ है वैसे ही बहू मोहिनी भी मिल सकती है। ऐसा परस्पर विश्वास देते हुए पुनः कार्य में जुट गये।

इधर धन्ना ने भी सारी बात जो सुनी वह सेठ

मोहनलाल (मोहिनी) को बता दी। तब उन्होंने सारी बात सुनकर अपनी खिड़की खोलकर देखा तो मन–मयूर नाच उठा, क्योंकि वह तो पतिदेव गणेश ही थे। फिर भी उस बात को मन में ही दबाकर बोलीं"देख धन्ना, यह सब भाग्य का चक्कर ही है। उसके पलटते ही सब–कुछ पलटने में देर नहीं लगती। इसलिये तुम जाकर उनको मेरी तरफ से कह दो कि किसी प्रकार की चिन्ता मन से निकाल कर काम करते रहो। क्योंकि अब थोड़े ही दिन का काम है। फिर पूरा होते ही तो यहाँ नगर एवं उसमें बने औषधालय, विद्यालय व पुस्तकालय आदि का उद्घाटन होगा। जिसमें बाहर के बड़े–बड़े राजा– महाराजा और जनता का आना होगा। उसमें आपकी बहू मोहिनी का भी आगमन हो सकता है। फिर भी यदि मिलन नहीं हुआ तो यह कार्य निवृत्त होने के बाद उन राजा–महाराजाओं के सहयोग से मैं स्वयं उनकी खोज कराऊँगा। इसलिये फिलहाल यहाँ सहज सबका मिलन हो गया है, तो अब बिखरने का नाम न लें। और जो उनके सबसे छोटे पुत्र आए हैं, उनको सबकी मजदूरी चुकाने के काम पर लगा देते हैं। ताकि वे खजाने से पैसा लेकर मजदूरी चुका कर सारा हिसाब रखें। और खास तौर पर तुझे उनकी सेवा में ही साथ–साथ रहना है ताकि उनकी हर आवश्यकता की पूर्ति का ध्यान रखना है। साथ ही तेरे पास वाले कमरे में ही उनके

सोने–बैठने की व्यवस्था कर देना।

धन्ना ने सेठ मोहनलालजी की सारी बात सुनी और उसी के अनुसार सेठ धनपत और उनके पुत्रों को बता दी। जिसको सुनकर सब प्रसन्न हो उठे। सेठजी व धन्ना के प्रति आभार व्यक्त करने लगे। तब धन्ना ने गणेश को अपने साथ लिया और अपने पास वाले कमरे में सारी व्यवस्था कर दी। सारा कार्य बड़ी तेजी से चल रहा था। कोट के अन्दर का कार्य पूरी तरह से सम्पन्न हो गया। सड़कें, चौराहे आदि के निर्माण का भी कार्य अति आवश्यक था, वह भी पूर्णता की ओर था। चारों दरवाजों के आस–पास बसने वाले श्रेष्ठीवर्यों की हवेलियों और दुकानों के निर्माण का कार्य भी सम्पन्नता की ओर था। रंगाई–पोताई आदि का कार्य भी पूरे जोरों से चल रहा था। क्योंकि नगर व उसमें निर्मित परमार्थ संस्थानों का उद्घाटन बैशाख शुक्ला तृतीया का निश्चित होकर रत्नपुरी के महिपाल नरेश के कर–कमलों द्वारा होने की घोषणा व उसके आमंत्रण पत्र जगह–जगह भिजवा दिये गये थे। ज्यों–ज्यों दिन नजदीक आने लगे त्यों–त्यों कार्य भी बड़े उत्साह के साथ तीव्र गति से चलकर समाप्ति की स्टेज पर पहुँच गया।

सेठ मोहनलाल की हवेली विशेष रूप से सजाई गई और सब प्रतिष्ठानों पर श्रेष्ठी धनपत व सेठानी लक्ष्मी

के नाम से जैसे श्री धनलक्ष्मी औषधालय, विद्यालय आदि और चारों मुख्य द्वारों पर धनलक्ष्मी नगर, चारों ओर जगह–जगह पर बगीचों आदि पर भी यही नाम लिखवा दिये। साथ ही चारों द्वार व मुख्य द्वार चौराहों व उन संस्थानों पर सेठ–सेठानी के चित्र निर्मित कराके उनको सुन्दर वस्त्रों से आच्छादित करा दिया।

(28)

आज अक्षय तृतीया का दिवस था। आगन्तुकों एवं महाराजा रत्नपुरी नरेश एवं उनके साथ आने वाले राजकीय अधिकारियों के लिये विशेष पांडाल सजाकर बैठने की व्यवस्था की गई। फिर श्रेष्ठीवर्य एवं उस नगर में आकर बसने वाले सेठ–सेठानियों एवं व्यापारियों के बैठने की व्यवस्था की गई थी। उसके बाद अपने परिवार वालों के बैठने की व्यवस्था के साथ ही नगर निर्माण में सहयोगी मजदूर, कर्मचारी वर्ग के बैठने की व्यवस्था कर दी गई। रत्नपुरी नरेश महिपाल के साथ राजप्रमुख व श्रेष्ठिवर्यों को भी आमंत्रित स्वयं ने जाकर कर दिया था जिससे उनके आगमन की भी तैयारी हो रही थी। यथासमय महाराजा महिपाल नरेश का आगमन हुआ और उनके कर–कमलों द्वारा चारों मुख्य द्वारों पर लगे शिलापट्ट, जिप पर लिखा था धनलक्ष्मी नगर, का अनावरण हुआ,

फिर उन पर बने चित्रों का।

ज्योंही उन पर धन्ना की, वहाँ काम करने वाले मजदूरों की व चारों पुत्रों के साथ तीनों बहुओं की दृष्टि पड़ी तो वे आँखें फाड़–फाड़ कर देखने लगे और आश्चर्य करने लगे कि ये चित्र हो हमारे सास–श्वसुर के अर्थात् माता–पिता के हैं। क्या बात है ? यह कौन मोहनलाल सेठ है। सब जाकर सेठ धनपत व सेठानी लक्ष्मी को भी ले के आये और रत्नपुरी नरेश के सामने उनको खड़े करके कहने लगे राजन् ये हमारे माता–पिता और अभी आपने जिन चित्रों का व नामपट्ट का अनावरण किया जो सब इनसे मिलते–जुलते हैं क्योंकि इनका नाम ही सेठ धनपत और सेठानी लक्ष्मी है। अब आप ही निर्णय करिये कि इसके पीछे क्या रहस्य है ? साथ ही हमारे मन में यह संशय भी पुष्ट होता जा रहा है कि हमारा यह पुत्र गणेश, इसकी पत्नी मोहिनी हमारे बिना पूछे घर से निकल गये थे, उनकी खोज करते–करते आज साल–भर हो गया है। हम भटकते–भटकते यहाँ पहुँचे और मजदूरी करते हुए यही सोच रहे थे कि कहीं हमारे पुत्रवधू का पता लग जाए। और सहज गणेश तो हमको कुछ दिन पहले ही मिला था पर पुत्रवधू का तो अभी तक कुछ पता ही नहीं चला है। इससे लगता है कि इस सेठ ने ही उसको छिपा रखा है। इसलिये आप हमारे संशय का निवारण कीजिये।

इस बात को सुनते ही रत्नपुरी नरेश महिपाल ने गौर से देखा तो चित्र व नाम तो बिल्कुल इनके ही मिलते हैं। परन्तु इनकी पुत्रवधू का कैसे पता लगायें। इस उधेड़बुन में नरेश मोहनलाल सेठ की ओर मुड़कर जानने की तैयारी करने लगे। लेकिन देखते क्या हैं, वह तो वहाँ से नदारद। इतने में तो वही मोहिनी अपने पुरुष वेष का परित्याग कर जो वेश घर में धारण करती थी, उसी को पहनकर वहाँ पहुँच गई और अपने सास–श्वसुर, जेठ–जेठानियों को नमस्कार करके फिर रत्नपुरी नरेश महिपाल के चरणों में झुककर स्वागत करते हुए कहने लगीँपधारिये, आपका स्वागत है। इस मधुर ध्वनि से स्वागत करके कोट के भीतर ले जाकर यथास्थान बैठने का आग्रह किया। साथ ही अपने सास–श्वसुर, जेठ–जेठानियों एवं बाल–बच्चों को धन्ना के साथ अन्दर महल में भेजा जहाँ उनके योग्य वस्त्र, जेवर सब पड़े थे और जल्दी इनको ये वस्त्र बदला कर इस सभा में लेकर आओ।

स्वयं रत्नपुरी नरेश महिपाल, राज्य–कर्मचारी आदि सभी आगन्तुक आँखें फाड़–फाड़ कर देख रहे थे कि यह सारा क्या रहस्यमय नजारा है। इतने में तो धन्ना स्वयं उन सबको उनके योग्य वस्त्र बदलाकर पुनः सबको मंडप में लाया और मोहिनी के संकेतानुसर उनके लिए

नियत स्थान पर बिठा दिया। फिर स्वयं मोहिनी ने अपने संकल्प से लगाकर घर का त्याग, आँधी–तूफ़ान में पतिदेव का बिछुड़ना, डाकुओं का सामना करना, यहाँ तक पहुँचना, तेले का तप, महामंत्र का स्मरण, धन्ना का सहयोग, मयूर टोकरी और पंखा व कंचुकी, उसके बदले प्राप्त रत्न, रत्नपुरी नरेश महिपाल ने नगर निर्माण हेतु स्वीकृति और पारिवारिक सदस्यों का पुनः मिलन आदि सारी घटित घटना का ऐसा चित्रण किया कि सुनकर सब के साथ रत्नपुरी नरेश महिपाल भी आश्चर्य करने लगे और बोल उठे कि स्वाभिमानी व्यक्ति हर जगह अपने पुरुषार्थ से सफल बन जाता है। यह एक नारी ने सत्य करके दिखला दिया है।

जिसने भी सुना, सबमें स्वाभिमान जाग्रत हुए बिना नहीं रहा। सभी लोग इसी बात की चर्चा करते हुए अपने–अपने स्थान को पुनः लौट गये। नया नगर, उसमें उपलब्ध सारी व्यवस्था देख–देख कर सबके मन में यह विचार बन गया कि अब तो इस नगर में आकर बसना हर दृष्टि से हितकर है। स्वयं रत्नपुरी नरेश महिपाल भी आश्चर्य प्रकट करते हुए बड़े गौरव के साथ बोले कि इस नारी ने अपने स्वाभिमान को रखते हुए जो कहा, वह कितने कष्ट सहने पर भी करके दिखाया। हम सबके लिये अनुकरणीय आदर्श है। मैं इस बहिन का सम्मान

करते हुए अपनी धर्मबहन बनाता हूँ और चाहता हूँ कि मेरे हाथ में राखी बांध कर मुझे अपने भाई के रूप में स्वीकार करे। इतने में तो सारा सभामंडप हर्ष–हर्ष की ध्वनि से गूंज उठा और मोहिनी ने भी अपने पतिदेव के साथ रत्नपुरी नरेश महिपाल के भाल पर कुंकुम का तिलक करके राखी बांध कर चरणों में नमस्कार किया। उसी समय रत्नपुरी नरेश ने अपने गले का एक हार बहिन मोहिनी को, दूसरा बहनोई गणेश को पहना कर अपने महल में उनके सब पारिवारिक सदस्यों को पधारने का आमंत्रण दिया और फिर बड़े हर्ष की अनुभूति के साथ सबको संकेत किया कि यह नगर भी रत्नपुरी का ही एक हिस्सा है। यहाँ निवास करने वालों के लिये और व्यापार आदि सभी कार्यों के लिए राज्य की तरफ से सारी व्यवस्था मुहैया कराई जायेगी। जो यहाँ बसना चाहें वे बड़े हर्ष के साथ यहाँ आकर बस सकते हैं।

रत्नपुरी नरेश के इस आदेश से सब में हर्ष की लहर व्याप्त हो गई। सबने उसी समय अपने–अपने निवास व प्रतिष्ठान हेतु जगह आवंटित करा कर कार्य भी प्रारम्भ कर दिया। जिससे थोड़े ही समय में ''धनलक्ष्मी नगर'' की यश–कीर्ति चहुँ दिश फैलने से चारों तरफ के बड़े–बड़े व्यापारी वहाँ आकर बसने लग गये।

रत्नपुरी नरेश महिपाल ने अपने राजमहल में जाकर दूसरे दिन ही राजसेवकों के साथ रथ भेजकर पूरे परिवार को लाने के लिए भेज दिया। जिससे पहले तो एक बार सब संकुचित हुए, पर उनके अति आग्रह से सब रथों में बैठकर राजभवन पहुँचे। स्वयं रत्नपुरी नरेश महिपाल व उनकी महारानियों ने अपनी सगी बहन व ननद के समान ही सत्कार–सम्मान देकर उसके स्वाभिमान की भूरि–भूरि प्रशंसा की। साथ ही धन्ना को देखकर तो महारानीजी एकदम आश्चर्य के साथ बोल पड़ींअरे ! तू तो वही है जिसने देवी प्रदत्त मयुर टोकरी, पंखा और कंचुकी लाकर दी, फिर तो आया ही नहीं। कहाँ है वह तुम्हारी देवी। तब धन्ना बोलींमहारानीजी, यही वह देवी है। और इनकी ही वे कलाकृतियाँ हैं और अब वही आपकी प्यारी नंनद बन गई है। तब तो रानीजी ने सारी कलाकृतियाँ लाकर राजा महिपाल को बतलाई। जिनको देखकर वे भी आश्चर्यचकित हुए बिना नहीं रहे।

सबको पूरे सम्मान के साथ भोजन कराया और सारा परिचय पूछा। तब मालूम पड़ा कि कंचनपुर नरेश ने थोड़े–से अपराध के दंडस्वरूप सारी हवेली और दुकान जब्त करके वहाँ से निकाल दिया। तब रत्नपुरी नरेश ने वहाँ भी समाचार दिलाये, जिनको पाकर कंचनपुर नरेश ने

क्षमायाचना की और पुनः वहाँ से आकर बसने का आग्रह किया। तब तीनों भाई और भाभियों को वहाँ भेज दिया।

इधर मोहिनी और उसके पति गणेश एवं सेठ धनपत और सेठानी लक्ष्मी को पूरे राज–सम्मान के साथ विदाई दी। तब वे सब धनलक्ष्मी नगर में अपने नये बने महल में निवास करने लगे। रत्नपुरी नरेश ने वह धनलक्ष्मी नगर एवं उसके आस–पास के दौ सो गाँव की जागीरी बहिन के रक्षाबंधन के उपलक्ष में प्रदान की और उप–राज्य के रूप में घोषणा करके गणेश का राजतिलक करके उनके हाथ में ही सारी व्यवस्था सौंप दी। अब वे एक राजा–रानी के रूप में जीवनयापन करने लगे। अब तो धन्ना का भी गौरव बढ़ गया व सेठ–सेठानी की सेवा के साथ सारी अंतरंग व्यवस्था संभालने लगा। अब महारानी मोहिनीदेवी ने एक योग्य सुशील कन्या के साथ धन्ना की शादी कराके उसको एक स्वतंत्र हवेली आवास–निवास के लिए दे दी जहाँ सुखपूर्वक अपना जीवन निर्वाह करने लगा।

कालान्तर में मोहिनी के भी क्रमशः तीन पुत्र हुए जिनके नाम आदित्य, समरादित्य ओर समरजीत रखे। वे भी युवा हो गये। रत्नपुरी नरेश महिपाल ने भी अपने सगे भानजों की तरह उनको प्रेम–स्नेह दिया और सर्वकलाओं में निपुण बनाया। जिसके फलस्वरूप तीनों ने स्वयं के

पुरुषार्थ के बल पर तीन नये राज्यों की स्थापना की और यौवन वय में बड़े–बड़े राजाओं की राजकुमारियों के साथ विवाह सम्पन्न हुए। सबके पुत्र पुत्रियों से भरा–पूरा परिवार हो गया। सेठ धनपत और सेठानी लक्ष्मी ने भी अपना अंतिम समय निकट जान कर संथारा ग्रहण करके पंडितमरण को वरण कर लिया।

गणेश नरपति एवं महारानी मोहिनी एक दिन महल के झरोखे में बैठे–बैठे परस्पर मनोविनोद कर रहे थे। बात–ही–बात में बीते दिनों की स्मृति चलचित्र की तरह उभरने लगी। उस पर चिन्तन करते हुए विचार करने लगे कि अहा ! वाह रे कर्मचन्द तू भी व्यक्ति को अपने प्रभाव से राजा से रंक बनाने में देरी नहीं करता और पुनः उसी रंक को राजा बनाने में भी पीछे नहीं रहता। तेरी माया बड़ी विचित्र है। कभी तो तू व्यक्ति को भूखे ही सोने के लिए विवश कर देता है तो कभी उसी को तू छप्पन भोग कराकर खुश कर देता है। कभी तो व्यक्ति को ऊँचे महलों में रत्नजड़ित सिंहासन पर बिठा देता है तो कभी उसको फटे हाल रहने पर विवश कर देता है। यह है तेरी शक्ति। वास्तव में तेरी शक्ति के सामने कोई टिक नहीं सकता।

ऐसा चिन्तन करते हुए पुनः विचार–धारा ने पलटा खाया और एक जटिल प्रश्न ने आकर भारी

समस्या पैदा कर दी। वह प्रश्न था कि आत्मा और कर्म दोनों में शक्तिशाली कौन है ? इस समस्या को सुलझाने में गणेश व मोहिनी दोनों ने अपने उपयोग रूपी समुद्र में गहरी डुबकियाँ भी लगाई लेकिन कोई भी समाधान नहीं निकला।

(30)

इतने में द्वारपाल ने आकर निवेदन कियौंराजन् आज हमारे महान् पुण्योदय से महान् तपस्वी विशिष्ट ज्ञानी धर्मघोष सूरसेन अपने विशाल शिष्य परिवार सहित पधारे हैं और नगरी के बाहर धनलक्ष्मी उद्यान में विराजमान हैं। यह सुनते ही दोनों के हर्ष का ठिकाना नहीं रहा।

बड़े उत्साह–उमंग के साथ रथ में बैठकर अपने महल से रवाना होकर धनलक्ष्मी उद्यान में पहुँचे और पाँचों अभिगमों को साधते हुए आचार्य धर्मघोष की उपासना में बैठे और आराधना के बाद अपने मन में उठने वाले प्रश्न के समाधान हेतु अर्ज करने लगे। भंते ! कर्म और आत्मा में शक्तिशाली कौन है ?

तब आचार्य धर्म घोष फरमाने लगेंराजन् यह संसार जीव और अजीवैंइन दो तत्त्वों के सम्बन्ध का ही परिणाम है जिसमें चैतन्य की शक्ति सर्वोपरि है। जिसमें

अनन्त ज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत सुख विद्यमान हैं। लेकिन कर्म अजीव तत्त्व की एक वर्गणा है जो काजल से भी ज्यादा सूक्ष्म है। और सारे लोक में ठूंस–ठूंस कर भरी हुई है। यहाँ तक कि आत्मा (चेतन) जिस भी शरीर में निवास करती है, उसके भीतर भी। लेकिन अपने जड़ स्वभाव के कारण चैतन्य पर स्वयं अपना कोई प्रभाव नहीं डाल सकती। जैसे बोतल में पड़ी शराब, डिब्बे में पड़ी मिर्च, शक्कर, गुड़ आदि।

ये वस्तुए वे जीव के ग्रहण करने पर ही अपना प्रभाव दिखाते हैं। वैसे ही कर्म भी जीव के उपयोग लक्षण के स्वभावानुसार संचरित होते हैं। तब उनमें एक्सरे मशीन से भी हजार गुणा अधिक कम्पन होता है जिससे जैसे काजल की डिब्बी में एक बारीक धागे के कम्पन से काजल चिपककर उस धागे के मूल स्वरूप को काला बना देता है वैसे ही यह कर्म रज जो उससे भी अधिक सूक्ष्म है, वे मिथ्यात्व, अव्रत, प्रमाद, कषाय और योग रूप शुभाशुभ अध्यवसाय के आधार से आत्मा के साथ चिपक जाते हैं। फिर अबाधाकाल के पूर्ण होते ही उदय में आते हैं तब वे अपनी शक्ति दिखाते हैं। कभी शुभ रूप में, कभी अशुभ रूप में। जब शुभ रूप में उदय में आते हैं तब एक रंक को राजा बनते देरी नहीं लगती और अशुभ रूप में

उदय में आते हैं तो रंक बनने में भी देरी नहीं लगती। लेकिन जीव जब मिथ्यात्वोदय से ग्रसित रहता है तब उस सुख–दुःख को पर निमित्त मानते हुए राग–द्वेष की परिणति से ग्रसित होकर नये कर्म का बन्धन कर लेता है। लेकिन जब उसके अन्तःमन में सम्यक्त्व की ज्योति प्रकट हो जाती है तब उसे यह ज्ञान होता है कि इस कर्मबंधन का कर्ता मैं ही हूँ और इससे बचने व तोड़ने का सामर्थ्य भी मेरे ही अन्दर है। यदि मैं अभिनव कर्मबंधन से बचता हुआ पूर्वबंधित कर्मों को तोड़ डालूं तो मैं भी अरिहंत बनकर सिद्धावस्था को प्राप्त करके अजर–अमर बन सकता हूँ।

और उसे प्राप्त करने का श्रेष्ठतम साधन यह मनुष्य जीवन ही है। तो फिर मैं इसको सत्ता, सम्पत्ति व इन्द्रियों जनित भोग–वासना की भट्टी में झोंक कर क्यूं बर्बाद करूं। क्यों नहीं मैं इससे संयम का आराधन करके उस दशा की प्राप्ति में इस मनुष्य जीवन का सदुपयोग कर लूं। यह चिन्तन दृढ़ होते ही आत्मा संयम मार्ग पर अपना चरण बढ़ाकर उत्तरोत्तर गुणस्थानारोहण करती हुई अरिहन्त दशा को प्राप्त करके सर्वकर्म का क्षय करके सिद्धावस्था का वरण कर लेती है। अर्थात् सिद्ध–बुद्ध–मुक्त बन जाती है। तो राजन् यह हैंआत्मा और कर्म की शक्ति

की महिमा।

नरपति गणेश और महारानी मोहिनी भी आचार्य धर्म घोष के इस मर्मभरे रहस्य को श्रवण करके गहन चिंतन करके संसार से विरक्त बनकर उन महापुरुषों के चरणों में ही संयम में अनुरक्त बनकर परित्तसंसारी बने। अर्थात् अपनी आत्मा का मार्ग प्रशस्त किया।

अ अ अ